फरवरी 2025

दादावाणी

पूरा संसार चार प्रकार के भावों में खेलता है :
1. हिंसक भाव 2. पीड़ादायक भाव
3. तिरस्कार भाव 4. अभाव भाव।
इन चारों सीढ़ियों को पार करने के बाद
पाँचवीं सीढ़ी पर भगवान महावीर पहुँचे थे,
वह अंतिम, 'वीतराग विज्ञान' का 'प्लेटफॉर्म' है!

अडालज : पारायण और मूर्ति प्राणप्रतिष्ठा : ता. 21 से 29 दिसम्बर 2024

अडालज : नये साल की पूर्व संध्या पर विशेष भक्ति : ता. 31 दिसम्बर 2024

वर्ष : 20 अंक : 4
अखंड क्रमांक : 232
फरवरी 2025
पृष्ठ - 32

Editor : Dimple Mehta
© 2025
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Multiprint
Opp. H B Kapadiya New High School, At-Chhatral, Tal: Kalol, Dist. Gandhinagar - 382729

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
5 साल
भारत : 1000 रुपये
वार्षिक
भारत : 200 रुपये
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

अक्रम विज्ञान ने बनाया 'वीतद्वेष'

संपादकीय

जगत् में जीवमात्र को सुख के संयोग पसंद हैं, ज़रा भी दु:ख के संयोग आएँ तो पसंद नहीं आते और परिणाम स्वरूप संयोगों या व्यक्तियों के प्रति उत्पन्न होते राग या द्वेष से नए कॉज़िज बंधते रहते हैं। लौकिक दृष्टि से लोगों में ऐसी समझ होती है कि द्वेष के बजाय राग को छोड़ना अधिक मुश्किल है, जबकि परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) कहते हैं कि राग के बजाय द्वेष जाना सबसे मुश्किल है। यदि पहले द्वेष चला जाए न, तो फिर राग चला जाएगा।

इस दुनिया में सबसे पहले द्वेष कहाँ से आता है कि मनुष्य यहाँ से जंगल में भाग गया, वहाँ पर भूख लगे, उस समय बेचैनी हो जाती है और बेचैनी में द्वेष ही होता है, राग नहीं होता। भूख लगी हो, उस समय सोना दिखाए तो उसके प्रति राग होगा उसे ? उसे द्वेष ही होगा। यह जगत् द्वेष से कायम है। संसार में भटकाने वाला मूल कारण द्वेष-बैर है। दूसरे शब्दों में कहें तो द्वेष-बैर से जगत् कायम है। इसलिए वीतद्वेष हो जाओ ताकि कहीं भी द्वेष-बैर नहीं रहें!

यह जगत् द्वेष से दु:खी है, राग से दु:खी नहीं है। राग से सुख ही उत्पन्न होता है। परंतु उस सुख में ही द्वेष समाया हुआ होता है। उसमें से ही द्वेष परिणमित होता है। इसलिए भगवान ने राग को बाद में छोड़ने के लिए कहा। पहले द्वेष ही छोड़ना है, राग नहीं। वीतद्वेष होने पर वीतराग अपने आप हो जाएँगे। 'मैं चंदूलाल हूँ', वह ही आरोपित जगह में राग है और दूसरी जगह में द्वेष है, यानी कि आत्मस्वरूप में द्वेष है। एक तरफ राग होता है, तो उसके सामने की ओर, सामने के कोने में द्वेष होता ही है। दादाश्री कहते हैं, कि हम स्वरूप का भान कराते हैं, तब अनंतकाल के पाप नष्ट हो जाते हैं, यानी द्वेष चला जाता है। शुद्धात्मा का *लक्ष* बैठा देते हैं, अर्थात् उसी क्षण वह 'वीतद्वेष' में आ गया।

द्वेष, वह कॉज़ है और राग, वह परिणाम है। अपनी पत्नी के प्रति यदि ज़रा सा भी द्वेष न होता हो, तो किसी स्त्री के प्रति राग ही नहीं होता, ऐसा नियम है! द्वेष न हो, तो पत्नी-बच्चे के प्रति राग ही उत्पन्न नहीं होता। अपने महात्मा ज्ञान मिलने पर वीतद्वेष हो जाते हैं। अत: संसार में से राग उठने पर ज्ञानी के प्रति राग होता है, वह प्रशस्त राग है, वही वीतद्वेष कहलाता है। वीतद्वेष हुआ, वह एकावतारी हो सकता है। वीतद्वेष में कच्चा रहेगा तो दो-चार जन्म होंगे।

राग का फल बेभानपना है और द्वेष का फल भय। ये दोनों चले जाएँ, तब वीतराग होते हैं। ज्ञान प्राप्ति के बाद भी डिस्चार्ज द्वेषभाव हो जाए तो सामने वाले को दु:ख होता है, इसलिए हमें प्रतिक्रमण का साधन दिया है। द्वेष के परिणाम आएँ तो उन्हें जागृतिपूर्वक जड़मूल से उखाड़ देना। वर्ना फिर से द्वेष के बीज में से ही राग उत्पन्न होगा। अत: उदय में आने वाले द्वेष परिणाम को समतापूर्वक निर्मूल करने का पुरुषार्थ शुरू कर सकें, यही हृदयपूर्वक अभ्यर्थना।

जय सच्चिदानंद

अक्रम विज्ञान ने बनाया 'वीतद्वेष'

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

पसंद-नापसंद में से राग-द्वेष

प्रश्नकर्ता : ये नापसंद-पसंद संयोगों को कौन उत्पन्न करता है?

दादाश्री : वह तो आपकी लाइक-डिस्लाइक देखते हैं कि आपको क्या पसंद है! जो पसंद है, उस तरह के संयोग उत्पन्न होते हैं, आपकी पसंद के। जैसे कि चोरी करना वही पसंद हो, तो चोर का संग मिल जाता है और आसपास का फ्रेन्ड सर्कल, बाकी सब वैसा मिल जाता है। अब, यहाँ जिसे चोरी करना नापसंद हो, उसने डिस्लाइक किया हो, उसने द्वेष किया होता है, उन चोर लोगों पर, तब भी वे मिल जाते हैं। राग-द्वेष किए, उससे ये सारे संयोग मिल जाते हैं। राग-द्वेष नहीं करोगे तो कोई भी संयोग नहीं मिलेंगे। हमें ऐसे संयोग नहीं मिलते, हमें राग-द्वेष नहीं है न! हमें थप्पड़ मारे तब भी हमें उस पर द्वेष नहीं होता, हम उसे आशीर्वाद देते हैं। अत: राग-द्वेष से यह होता है जबकि यह 'ज्ञान' मिलने के बाद राग-द्वेष नहीं होते। राग-द्वेष, वे कॉज़ेज़ (कारण) हैं, उनमें से इफेक्ट (कार्य) में संयोग उत्पन्न होते हैं।

ये जो संयोग मिलते हैं, वे सारे आपके पिछले जन्म के कॉज़ेज़ हैं, उनका यह परिणाम है। पिछले जन्म में कॉज़ेज़ इकट्ठे किए हैं, उन कॉज़ेज़ के आधार पर आपको माँ-बाप का संयोग मिलता है। माँ-बाप अच्छे मिलते हैं, भाई अच्छे मिलते हैं। वे संयोग किससे उत्पन्न होते हैं? तब कहते हैं, 'आप जगत् को सुख दो, मनुष्य, जीवमात्र को, तो सभी संयोग अच्छे मिलेंगे। दु:ख दोगे तो संयोग बिगड़ेंगे'। अत: भगवान को इससे लेना-देना नहीं है। आपका ही यह क्रिएशन (सर्जन) है यह और आपका ही प्रोजेक्शन (योजना) है यह।

इस जगत् में जीवमात्र राग-द्वेष करते हैं, वे सभी कॉज़ हैं और उनमें से ये कर्म उत्पन्न हुए हैं। जो खुद को पसंद हैं, वे और जो नापसंद हैं, वे दोनों ही कर्म आते हैं। नापसंद पीड़ा देकर जाते हैं, यानी दु:ख देकर जाते हैं और पसंदीदा सुख देकर जाते हैं। यानी कॉज़ेज़ पिछले जन्म में डले थे, वे इस जन्म में फल देते हैं। सुख में और दु:ख में राग-द्वेष करते हैं इसलिए 'कॉज़ेज़' बंधते हैं और सुख में और दु:ख में नॉर्मल रहें, सम रहें तो कॉज़ेज़ बंद हो जाते हैं। पसंद आए लेकिन राग नहीं होना चाहिए। नापसंद हो फिर भी द्वेष नहीं होना चाहिए। पसंद-नापसंद वह मन का धर्म है, 'अपना' धर्म नहीं है वह!

प्रश्नकर्ता : दादा, पसंद-नापसंद वही राग-द्वेष हैं न?

दादाश्री : नहीं, उसे राग-द्वेष नहीं कहते। पसंद और नापसंद, वह ज्ञानी पुरुष को भी होते हैं। ये ज्ञानी पुरुष भी यदि गद्दी यहाँ हो और पास में चटाई हो तो वे गद्दी पर बैठेंगे। क्योंकि विवेक है और वह सभी को मान्य है। यदि कोई कहे कि 'यहाँ से उठकर वहाँ बैठिए' तो हम वह भी करेंगे। हमें भी पसंद-नापसंद होता है।

आप यहाँ से उठाकर नीचे जमीन पर बैठाओगे तो हम वहाँ लाइक (पसंद) करके बैठ जाएँगे। हमारे लाइक-डिस्लाइक के थोड़े बहुत पूर्वपर्याय (भरा हुआ माल) होते हैं। बाकी, आत्मा को ऐसा नहीं होता। पसंद-नापसंद वह चेतनता का फल नहीं है।

पसंद-नापसंद की विशेष समझ

प्रश्नकर्ता : अक्रम ज्ञानी को पसंद-नापसंद होते हैं? वह किस प्रकार से?

दादाश्री : पसंद-नापसंद सिर्फ दिखाने को होते हैं, नाटकीय। अभी मैं वहाँ पर आऊँगा, आपके वहाँ बैठने के लिए, तो आपने मेरे लिए बैठने की जगह बनाई होगी वहाँ मैं बैठूँगा। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि वह हमें पसंद है। मूलत: हमें वहीं पर अच्छा लगेगा और फिर कोई कहेगा, 'नहीं, यहाँ नहीं बैठना है', तो हमें कोई हर्ज़ नहीं।

प्रश्नकर्ता : तो वह उसमें वीतराग रहने के समान है?

दादाश्री : यानी उसे लाइक-डिस्लाइक कहते हैं। उसे राग-द्वेष नहीं कहते, लाइक-डिस्लाइक।

प्रश्नकर्ता : ठीक है दादा, लेकिन जो पसंद-नापसंद है, जिनमें थोड़ा तन्मयाकारपन होता है।

दादाश्री : पसंद-नापसंद विवेक के कारण है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, विवेक के कारण है तब तक ठीक है, तब तक राग-द्वेष नहीं हैं। लेकिन पसंद-नापसंद में जो थोड़ा तन्मयाकारपन हो जाता है...

दादाश्री : हो जाता है, तन्मयाकार हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : अत: वहाँ पर भले थोड़े मंद लेकिन राग-द्वेष तो होते हैं न?

दादाश्री : राग-द्वेष शब्द हैं ही नहीं। राग-द्वेष कब कहलाते हैं कि 'मैं खुद ही चंदूलाल हूँ' और 'वही हूँ', ऐसा वापस यही डिसिज़न (निर्णय) आ जाए, मूल जगह पर आ जाए और आज्ञा का पालन न करता हो, तब राग-द्वेष कहलाते हैं। राग-द्वेष, वे खुद कर्म कहलाते हैं। इन्हें (ज्ञान प्राप्त महात्माओं को) कर्म बंधन नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : ठीक है।

दादाश्री : कैसे भी राग-द्वेष हैं, ऐसा दिखाई तो देता है, लेकिन वे जीवंत नहीं हैं, वह अजीव भाग है। उन लोगों (अज्ञानी) के राग-द्वेष और इनके (महात्माओं के) राग-द्वेष में फर्क नहीं है, ऐसा लगता है लेकिन यह अजीव भाग है।

प्रश्नकर्ता : तो दादा, पसंद-नापसंद और राग-द्वेष, उनमें क्या अंतर है?

दादाश्री : पसंद-नापसंद तो रति-अरति जैसी बात है, लाइक एन्ड डिस्लाइक जैसा।

प्रश्नकर्ता : लाइक होता है तब? राग होता है तब लाइक होता है न?

दादाश्री : उसका सवाल ही नहीं है, लाइक-डिस्लाइक का हर्ज नहीं है। लेकिन राग यानी क्या है? यह पसंद में आत्मा एकाकार हो जाए तो वह राग कहलाता है और आत्मा एकाकार नहीं होता तो राग नहीं कहलाता है। और नापसंद हो लेकिन आत्मा एकाकार हो जाए तो द्वेष कहलाता है और नापसंद होता है वहाँ आत्मा एकाकार नहीं होता और जाने तो द्वेष नहीं कहलाता। ये पसंद-नापसंद इन्हें भगवान ने राग-द्वेष नहीं कहा है, रति-अरति कहा है। ये रति-अरति तो नो-कषाय

हैं, उसका हर्ज नहीं है। राग-द्वेष का भगवान ने हर्ज जताया है।

राग-द्वेष का निकाल होने पर हल आएगा

राग-द्वेष हो जाते हैं?

प्रश्नकर्ता : राग-द्वेष होते तो हैं ही न!

दादाश्री : तो राग-द्वेष बंद होने का कोई साधन तो होगा न?

प्रश्नकर्ता : सही समझ मिलनी चाहिए।

दादाश्री : द्वेष बंद हो जाए तो अच्छा है या फिर राग बंद हो जाए तो अच्छा?

प्रश्नकर्ता : द्वेष तो समझे, लेकिन राग का अर्थ क्या है? द्वेष अर्थात् ईर्ष्या, किसी के लिए बैर।

दादाश्री : ईर्ष्या, तिरस्कार, अभाव, नापसंद और उसके विरोधी शब्द राग में आते हैं। राग अर्थात् पसंद, आकर्षण। यह 'पसंद नहीं है', इसका कोई हल लाना है या नहीं लाना? यह जो 'पसंद है' इसका भी हल लाना है, इन्हें संभालकर नहीं रखना है। जो बातें 'अच्छी लगती हैं', उन्हें संभालकर नहीं रखना है, उनका भी हल लाना है और इनका भी हल लाना है। जो 'अच्छा लगता है', वह भरा हुआ राग निकल रहा है और जो 'अच्छा नहीं लगता', वह भरा हुआ द्वेष निकल रहा है। अत: द्वेष का हल लाना है। यानी वहाँ पर हमारी तरह रहना है, सभी के साथ मिल-जुलकर! (क्योंकि द्वेष की वजह से जुदाई हो जाती है, जबकि मिल-जुलकर रहने से जुदाई मिट जाती है और द्वेष खत्म हो जाता है।)

प्रश्नकर्ता : सामान्यत: ऐसा तो समझ में आता है कि द्वेष का *निकाल* करना है लेकिन राग का भी *निकाल* करना है, वह तो ज़रा भारी बात है।

दादाश्री : वह तो सभी का *निकाल* करना पड़ेगा। *निकाल* किए बगैर तो कैसे चलेगा फिर? जमा किया हुआ माल सौंप देना पड़ेगा। जिनके जो भी परमाणु हों न, तो उनके वे परमाणु सौंपकर मुक्त हो जाना। जो पसंद नहीं हैं, वे भी सौंप देने पड़ेंगे और जो पसंद हैं, वे भी सौंप देने पड़ेंगे। उसके बाद वीतराग हो जाना है। अब यह चारित्रमोहनीय अर्थात् भरा हुआ माल निकालना है, भरे हुए माल का हिसाब चुका देना है, चारित्रमोह का समभाव से *निकाल* करना है।

भटकाने वाला मूल है द्वेष

प्रश्नकर्ता : राग ही जन्मांतर बढ़ा देता है न?

दादाश्री : वह तो बढ़ा ही देता है न, राग तो!

प्रश्नकर्ता : राग भी आग है न?

दादाश्री : राग? राग आग नहीं है। यदि राग आग होता तो राग होता ही नहीं। इच्छा वह अग्नि है, राग वह आग नहीं है। जब राग होता है न तब तो बल्कि व्यक्ति को अच्छा लगता है, ठंडक महसूस होती है।

प्रश्नकर्ता : द्वेष तो फुसकी पटाखे जैसा है। फुस्स करके उड़ जाएगा। द्वेष ज़्यादा नुकसान नहीं पहुँचाता लेकिन यह जो राग है वह बहुत नुकसान पहुँचाता है, क्या यह बात सही है?

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं है। यह जगत् द्वेष से खड़ा है, बैर से। और बैर में से राग उत्पन्न हुआ है। अत: खड़े रहने का मूल कारण यह बैर है। दूसरे शब्दों में कहें तो जगत् बैर से खड़ा है। वह द्वेष, बैर वगैरह एक ही तरह के हैं। उससे यह जगत् खड़ा है! अत: निर्बैरी हो जाओ ताकि किसी जगह बैर न रहे! जब आत्मज्ञान प्राप्त होता

है तो सब से पहले वीतद्वेष हो जाता है। उसके बाद वीतराग हो जाता है।

इस संसार में जो राग है, वह किसके जैसा है? जैसे कि, जेल में बैठा हुआ व्यक्ति जेल में जाते समय रोता है। लेकिन जेल में जाने के बाद जेल को लीपता-पोतता है। लीपता है या नहीं लीपता, खड्डे वगैरह हों तो? उससे हमें लगेगा कि ओहोहो! जेल पर राग है। फिर हम उससे पूछें कि तुझे जेल पर राग है? तब वह कहता है, 'नहीं भाई, जेल पर कभी राग होता होगा? लेकिन यहाँ रात को सोएँ कैसे? इसलिए ऐसा कर रहे हैं'।

उसी तरह इस संसार पर भी राग नहीं है लेकिन क्या हो सकता है? यहाँ फँस चुके हैं इसीलिए लीपना-पोतना पड़ता है, सबकुछ करना पड़ता है। लीपना पड़ता है या नहीं लीपना पड़ता?

प्रश्नकर्ता : लीपना पड़ता है, दादा।

दादाश्री : अर्थात् बाहर वाले लोग ऐसा समझते हैं कि इन्हें जेल पर राग हो गया है। अरे भाई, क्या राग होता होगा जेल पर? मजबूरन करना पड़ता है सबकुछ। नहीं करना पड़ता?

द्वेष ही जननी, राग की

प्रश्नकर्ता : द्वेष छोड़ने से राग चला जाएगा?

दादाश्री : उस राग की चिंता ही मत करना। छोड़ना द्वेष ही है। राग को छोड़ना ही नहीं है। भगवान ने कहा है कि वीतद्वेष हो जाओ। उसके बाद वीतराग हो जाओ, अपने आप हो सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : लोग ऐसा कहते हैं कि जहाँ पर राग अधिक होता है वहीं पर द्वेष अधिक हो जाता है।

दादाश्री : नहीं। द्वेष है इसलिए राग उत्पन्न होता है उसे। यदि मुझे किसी पर द्वेष होगा तो राग उत्पन्न होगा। मुझे द्वेष नहीं होता है, फिर मुझे राग कैसे उत्पन्न होगा? अत: द्वेष में से राग उत्पन्न हुआ है। इसमें द्वेष वह 'कॉज़ेज़' है और राग वह 'परिणाम' है। अत: तू परिणाम की चिंता मत कर, 'कॉज़ेज़' की चिंता कर, ऐसा कहते हैं। इतनी सूक्ष्म बात समझ में नहीं आती न! यह बहुत सूक्ष्म बात है!

प्रश्नकर्ता : द्वेष वह 'कॉज़' है और राग वह 'परिणाम', ऐसा किस तरह से है?

दादाश्री : हाँ, द्वेष वह कॉज़ेज़ है और राग वह परिणाम है।

प्रश्नकर्ता : क्योंकि राग व द्वेष साथ में ही रहते हैं। राग हो, वहाँ पर द्वेष रहता ही है।

दादाश्री : नहीं, द्वेष होता है और द्वेष के रिऐक्शन में राग होता है। यदि ज़रा सा भी द्वेष न हो तो राग उत्पन्न ही नहीं होगा।

चार कषाय, वे हैं द्वेष

राग-द्वेष, क्रोध-मान-माया-लोभ, वे सभी दु:ख देने वाली चीज़ें हैं। उन्हीं को कषाय कहते हैं। जितना अच्छा लगता है वह राग कहलाता है और जो अच्छा नहीं लगता, वह द्वेष कहलाता है। क्या राग बहुत पसंद है? आर्त और रौद्रध्यान? तो फिर? राग कैसे कह रहे हो? तो फिर जो द्वेष है, वह पसंद है क्या?

प्रश्नकर्ता : नहीं पसंद।

दादाश्री : राग और द्वेष, इसमें कौन गुनहगार है, ढूँढ निकालो। ये गुनहगार नहीं मिलने से तो पूरा जगत् लटक गया है।

मुझे इसमें मसाले-वसाले डालकर पिलाओगे, तब मुझे राग हो जाएगा तो उसमें हर्ज नहीं है। कभी फिर से चाय याद आएगी तो हर्ज नहीं है, लेकिन कोई कड़वा दें और उसे पीते समय द्वेष हो जाए तो हर्ज है। उस पर राग होगा और फिर से याद आए, उसमें हर्ज नहीं है। फिर से याद आए तो वापस पी लेंगे। तीसरी बार आए तो तीसरी बार पी लेंगे परंतु इसका अंत होता है। जबकि द्वेष अनंत हैं, उसका अंत ही नहीं है। और वह (राग) अंत वाला है। इसलिए मैंने आपको यह वीतद्वेष पद दिया है। इससे अपने आप वीतराग होते जाओगे।

प्रश्नकर्ता : शास्त्रों में भी ऐसा कहा गया है कि ममता छोड़ो। ममता छोड़नी है। तो ममता छोड़ने की यानी पहले राग छोड़ने की बात आती है न?

दादाश्री : ममता की तो यहाँ पर बात ही नहीं है। अपने यहाँ ममता शब्द की बात ही नहीं है। यह वीतद्वेष यानी क्या? 'ममता खत्म होने के बाद द्वेष जाता है, वर्ना नहीं जाता', यहाँ पर वह बात है ही नहीं। वह तो बाहर की बात हुई।

प्रश्नकर्ता : बाहर की ही बात है।

दादाश्री : लेकिन वह बात यहाँ पर काम ही नहीं आती न! अपने यहाँ पर तो वीतद्वेष हो जाते हैं। पहले ये वीतद्वेष हो चुके हैं न! वीतराग नहीं बनाया है। वीतराग नहीं बनाना है, वीतराग तो होते जाओगे। बीज निकाल दिया है मैंने, बीज खत्म हो गया।

यह समझ में न आए तो बारह-बारह महिनों तक लोगों को समझ में न आए ऐसी बात है, बारह महीने नहीं, लाख सालों तक भी समझ में न आए, ऐसी बात है।

प्रश्नकर्ता : दादा, अब दूसरी बात पूछता हूँ। आपने जो द्वेष कहा है, ये राग और द्वेष दो शब्द हैं। राग में लोभ और माया आते हैं और द्वेष में मान और क्रोध आते हैं तो...

दादाश्री : आप ये सब जो बातें कर रहे हैं, वे सभी बाहर की बातें हैं। उसका और इसका लेना-देना नहीं है।

प्रश्नकर्ता : शास्त्रों में जो लिखा है, उसकी बात कर रहा हूँ।

दादाश्री : शास्त्र तो सही हैं, लेकिन वह बाहर की बात है। बाहर की बात अर्थात् स्थूल बातें, लौकिक बातें हैं जबकि ये अलौकिक बातें हैं।

क्रोध-मान-माया-लोभ, वे ही द्वेष हैं। वे चारों ही द्वेष हैं।

प्रश्नकर्ता : शास्त्र में दो को कहा गया है।

दादाश्री : वे तो दो को कहेंगे लेकिन आखिर में ये सब द्वेष ही हैं, क्योंकि जो आत्मा को पीड़ित करते हैं, वे सभी कषाय कहलाते हैं। जब तक वे रहेंगे तब तक यह सब होता रहेगा। अपने यहाँ पर आपको वीतद्वेष बना दिया है। आपको इतना ही देख लेना है कि क्या ऐसा लगता है कि आप वीतद्वेष हो गए हैं?

प्रश्नकर्ता : लगता है।

दादाश्री : फिर वीतराग वह तो परिणाम है। अतः उसके लिए कुछ करना नहीं पड़ा। कॉज़ेज़ निकाल दिए हैं न! मूल कॉज़ेज़ खत्म कर दिए।

अब बात इतनी अधिक सूक्ष्म है और ऐसी है कि कई सालों तक समझ में नहीं आए! यह बुद्धि गम्य बात नहीं है, यह तो ज्ञान गम्य बात निकली है।

सर्व विरति गुणस्थानक

जब तक ज्ञान नहीं मिलता, तब तक राग और द्वेष, दोनों ही करता रहता है, तीसरी कोई चीज़ ही नहीं होती। राग-द्वेष, दोनों डिस्चार्ज स्वरूप हैं, ज्ञान लेने के बाद और यदि सामने वाले पर द्वेष हो, तो उसे दु:ख होता है, इफेक्ट (असर) होती है। इसलिए आप प्रतिक्रमण कर लें तो द्वेष धुल जाता है। प्रतिक्रमण करने से आपके सारे अटैक के विचार बंद हो जाते हैं। इसलिए फिर मन को द्वेष नहीं होता।

'शूट ऑन साइट' (देखते ही गोली मारना) जिसके हाथ में आ गया उसका बाकी क्या रहा? और द्वेष गया बाद में रहा क्या फिर? द्वेष गया यानी क्या? चार कषायों में से दो कषाय निर्मूल हो गए। निर्मूल हो गए, यानी क्या? क्रोध, लेकिन क्रोध के परमाणु नहीं। अत: चंदूभाई को गुस्सा आता है लेकिन उन्हें खुद को अच्छा नहीं लगता। यानी द्वेष तो पूर्णत: चला गया है, लेकिन कपट व लोभ थोड़े-बहुत बचे हैं। वे जब खत्म होंगे तब वीतराग होंगे। तब यह चारित्रमोहनीय में चला जाएगा। हर एक का विभाजन करने पर सब अलग-अलग हो जाएगा।

सर्व-विरति किसे कहते हैं? किसी भी जीव का दोष नहीं दिखाई दे। कोई गाली दे रहा हो लेकिन उसका दोष नहीं दिखाई दे, उसे सर्व-विरति कहते हैं! इससे ज़्यादा बड़ा सर्व-विरति पद नहीं होता।

किसी के दोष नहीं दिखें तो जानना कि सर्व-विरति पद है, संसार में बैठे रहने पर भी! ऐसा यह 'अक्रम विज्ञान' का सर्व-विरति पद अलग प्रकार का है। संसार में रहते हुए, धूपेल ऑइल सिर में डालते हो फिर भी, कान में इत्र वाली रूई डालकर घूमता हो लेकिन उसे किसी का भी दोष नहीं दिखता।

'अक्रम' में सर्व-विरति पद उसे कहते हैं कि किसी का किंचित्मात्र दोष नहीं दिखाई दे। तब से सर्व-विरति पद है, ऐसा मानकर चलना। भले ही फिर कान में इत्र वाली रूई डाली हो उससे 'मुझे' हर्ज नहीं है, लेकिन किसी जीव का दोष नहीं दिखता, साँप काँटे तब भी साँप का दोष नहीं दिखता, ऐसा यह विज्ञान है अपना।

प्रश्नकर्ता : फिर 'अक्रम' के उस पद में 'प्रतिक्रमण' जैसा कुछ भी नहीं रहता न?

दादाश्री : फिर प्रतिक्रमण रहता ही नहीं है। लेकिन वह दोष नहीं दिखता ऐसा मान मत लेना, इससे अच्छा है कि प्रतिक्रमण करना न! आपको क्या नुकसान होगा? वर्ना नया कुछ ढूँढ निकालने में कहीं उल्टा चला जाएगा।

वीतद्वेष हुआ उसे एकावतारी कहते हैं। वीतद्वेष में जिसका कच्चा रह गया हो, उसके दो-चार जन्म होंगे।

पहला द्वेष, सूक्ष्म में

प्रश्नकर्ता : द्वेष के बजाय राग को छोड़ना मुश्किल है।

दादाश्री : नहीं, राग को छोड़ना सब से आसान है। द्वेष जाना सब से मुश्किल है। पहले द्वेष नहीं जाता, इसीलिए यह राग नहीं जाता। राग तो बेचारा, जब द्वेष चला जाएगा न, तो राग भी चला जाएगा।

अब वेदांत मार्ग के सब से बड़े बुद्धिशाली, कबीर साहब उन्होंने भी कहा है कि, 'भूख लगे तब कुछ नहीं सूझे'। ज्ञान-ध्यान सब रोटी में

चला जाता है, 'कहत कबीरा सुनो भाई साधु, आग लगो ये पोठी में'।

जबकि वीतरागों ने 'आग लगो इस पोठी में' नहीं कहा। उन्होंने ज्ञान से पता लगाया इसका, ज्ञान से पृथक्करण किया और इनको (कबीर साहब को) ऐसा ही लगा कि, यह मेरी ही पोठी है। अत: उसे यहीं से जला दो न। जबकि वीतरागों ने पृथक्करण किया कि मैं अलग और यह अलग, आहारी आहार करता है, मैं तो निराहारी हूँ। तो वीतरागों ने फिर ऐसी खोज की, उसके बाद उन्होंने पोठी पर द्वेष नहीं किया जबकि वे द्वेष करते हैं न? 'आग लगो इस पोठी में', वह क्या कम द्वेष है? पोठी को जला दे! किसी ने अभी तक जलाया है? कहते ज़रूर हैं लेकिन जलाते हैं क्या?

तो इस दुनिया में पहला द्वेष किसमें से आता है कि मनुष्य यहाँ से जंगल में भाग गया, वहाँ पर फिर भूख लगे तो उस समय बेचैनी हो जाती है और बेचैनी में द्वेष ही है, राग नहीं है। जब भूख लगे, उस समय यदि उसे सोना-वोना दिखाया जाए तो क्या उसे उस पर राग होगा? उसे द्वेष ही रहेगा। अत: इस संसार की शुरुआत द्वेष से हुई है। और द्वेष की शुरुआत होने से यह फाउन्डेशन (नींव) खड़ा है।

द्वेष के आधार पर ही खड़ा है। इसका फाउन्डेशन ही द्वेष है। अत: जब हम ज्ञान देते हैं तब द्वेष चला जाता है। उसके बाद चीज़ों की तरफ आकर्षण रहता है, वह भी व्यवहारिक आकर्षण, निश्चय का आकर्षण नहीं है! वीतद्वेष पहले होना चाहिए। उसके बाद वीतराग हो सकते हैं। वीतद्वेष हो जाने के बहुत समय बाद वीतराग हो सकते हैं।

राग में पसंद है अपनी

प्रश्नकर्ता : वीतराग किस तरह से हुआ जा सकता है?

दादाश्री : वीतराग अपने आप ही हो जाते हैं। वीतराग होने के लिए कुछ करना नहीं है। वीतद्वेष होना वही सब से मुश्किल काम है!

प्रश्नकर्ता : आपने उस दिन कहा था न कि द्वेष की वजह से ही राग है।

दादाश्री : हाँ, द्वेष में से ही सारा राग है। कड़वा खाने के बाद ज़रा यों ही दूसरा कुछ खाएँ तो उस चीज़ पर हमें राग हो जाता है! उसे खाने से कड़वाहट ज़रा कम हो जाती है न! और यों ही खा लिया होता तो राग नहीं होता। अत: द्वेष में से ही राग उत्पन्न हुआ है। यानी पहले द्वेष जाता है और बाद में राग जाता है। राग अर्थात् पसंद की चीज़ है और द्वेष वह कुदरती है।

अभी यहाँ एक बड़ा राजा हो, बहुत ही सुखी हो, किसी पर राग-द्वेष नहीं करता हो। लेकिन जंगल में गया हो और रास्ता भूल गया हो, तब उसे भूख लगे तो उस समय उसे राग होगा? भूख लगने पर क्या होगा? दु:ख होगा और वेदना होगी न? अब, भूख लगने पर वह वहाँ क्या करेगा? किसी भी तरह झूठ बोलकर या चोरी करके भी कुछ खा लेगा। खाएगा या नहीं खाएगा? और किसी गरीब के बेटे की जूठी रोटी पड़ी हो तब भी वैसी रोटी खा लेगा या नहीं खाएगा?

प्रश्नकर्ता : खा लेगा। क्योंकि उसे भूख लगी है।

दादाश्री : क्योंकि उसे अंदर जो दु:ख होता है, वह द्वेष होता है। जब पेट में इतना डालता है तब जाकर द्वेष शांत होता है। और झूठ बोलकर

हम किसी का कुछ ले आएँ हो और फिर कोई वह छीन ले तो उस पर द्वेष होगा न या राग होगा?

प्रश्नकर्ता : द्वेष होगा।

दादाश्री : अत: इन सब के कारण द्वेष है। इन पाँच इन्द्रियों की बिगिनिंग (शुरुआत) के कारण द्वेष है और फिर राग कब होता है? फिर भले ही वह चोरी करके लाए लेकिन एक तरफ रोटी हो या पराठा हो और दूसरी तरफ पूरनपूरी हो, तो तुरंत कहेगा, पूरनपूरी खाऊँगा! यह राग। इसमें पसंदगी होती है न? लेकिन मूलत: तो द्वेष होता है न? मूलत: द्वेष होता है, उसके बाद राग आता है। अत: राग तो एक तरह से अपने शौक की चीज़ है। राग तो सरप्लस (अधिक) हो जाने के बाद होता है। लेकिन जो मुख्य ज़रूरतें हैं, उनके लिए तो द्वेष ही होता है। नेसेसिटी (ज़रूरत) में कोई कमी आ जाए तो द्वेष होता है। कोई वह रोटी ले ले तो उस समय, उस पर उसे कितना द्वेष हो जाएगा? अत: राग निकल सकता है। राग से कोई परेशानी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लोग ऐसा कहते हैं, राग पर ही पूरा संसार खड़ा है।

दादाश्री : अपना अक्रम विज्ञान क्या कहता है? द्वेष की नींव पर ही यह संसार खड़ा है। जिसकी वह नींव टूट जाएगी, उसका राग अपने आप ही चला जाएगा। वह राग, चाय का राग होता है न, उसे पहले जलेबी खिला दें तो?

प्रश्नकर्ता : चाय फीकी लगेगी।

दादाश्री : चाय के प्रति राग कम हो जाएगा। यह ज्ञान देते हैं न, तब ज्ञान से जो सुख उत्पन्न होता है, उससे बाकी के सारे सुख फीके लगने लगते हैं। उससे राग खत्म हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : वह अनुभव सिद्ध चीज़ है।

दादाश्री : हाँ, अनुभव सिद्ध।

भूख का मूल कारण द्वेष

वीतराग को कोई कर्तापन नहीं होता। अपने आप ही होता रहता है। क्योंकि द्वेष अर्थात् मनुष्य राग से खाता है या द्वेष से खाता है? मनुष्य जब खाने जाता है तो वह राग से खाता है या द्वेष से?

प्रश्नकर्ता : राग से खाता है न!

दादाश्री : ना, द्वेष से खाता है।

प्रश्नकर्ता : वह समझाइए दादा, वह ठीक से समझ में नहीं आया।

दादाश्री : जब तक उसे भूख नहीं लगती न, तब तक बैठा रहता है बेचारा। जब भूख लगती है न, तब अंदर दु:ख होता है, दु:ख होने पर वह द्वेष करता है न! भूख लगती है, वही द्वेष का कारण है। प्यास लगती है, वह द्वेष का कारण है। उसे द्वेष होता है, वर्ना भूख ही नहीं लगती हो तो? विषय से संबंधित भूख नहीं लगती हो, देह से संबंधित भूख नहीं लगती हो और कोई भूख नहीं लगती हो तो?

प्रश्नकर्ता : तो मनुष्य वीतराग हो जाएगा।

दादाश्री : वीतराग ही है न! यह तो भूख लगती है। कितने प्रकार की भूख लगती है उसे?

प्रश्नकर्ता : अनेक प्रकार की भूख हैं न!

दादाश्री : नहीं, यों ही, भूख नहीं लगी इसलिए आज घूमने ही नहीं जाना है, आज सोते रहना है। इसके बावजूद भी भूख लगे बगैर रहेगी क्या? छोड़ेगी? एक दिन या दो दिन?

प्रश्नकर्ता : लगेगी।

दादाश्री : फिर अंदर क्या होता है उसे?

प्रश्नकर्ता : अकुलाहट होती है।

दादाश्री : अत: दु:ख होता है, वेदना होती है। वेदना होती है उसका अर्थ यह है कि द्वेष परिणाम उत्पन्न हुए। द्वेष परिणाम उत्पन्न होते हैं तो जो कोई आए उसे गालियाँ देता है। हाँ, भूख लगने पर गालियाँ देता है, उसे काट भी लेता है। कोई खाना लेकर जा रहा हो और उसे नहीं दे तो काट लेता है। तो भूख में ऐसा, प्यास में ऐसा, विषय में ऐसा! विषय एक प्रकार की भूख है। सिनेमा में नहीं जाने दो, उसे भूख लगी हो और नहीं जाने दो, तब क्या होगा? द्वेष करेगा या राग करेगा?

प्रश्नकर्ता : द्वेष करेगा।

दादाश्री : यानी इस द्वेष से ही सारा जगत् खड़ा है। राग को तो बेचारे को कोई परेशानी ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : क्या ऐसा है कि जिसे बहुत भूख लगती है, उसे बहुत द्वेष होता है?

दादाश्री : हाँ, हाँ। कम भूख लगे तो कम द्वेष होता है। जिसने पिछले जन्म में ब्रह्मचर्य के भाव का पालन किया हो, अर्थात् वैसा भाव चार्ज किया हो, उसे इस जन्म में ब्रह्मचर्य का उदय आता है। उसका उदय आने के बाद उसे वह भूख नहीं लगती। यानी उसका उस तरफ का द्वेष चला गया। तो उस तरफ से वह वीतद्वेष हो गया। उसी प्रकार जिस-जिस चीज़ की भूख नहीं लगती, उसमें वीतद्वेष हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : जब तक शरीर है, तब तक भूख तो लगेगी ही।

दादाश्री : नहीं, लेकिन जिसने ब्रह्मचर्य का भाव किया हो उसकी एक भूख तो उतनी कम हो सके, ऐसा है। बाकी सब प्रकार की भूख तो लगेंगी ही।

प्रश्नकर्ता : हाँ, दूसरा जो हमें अनाज खाने की भूख है, वह भूख तो लगेगी ही तो फिर द्वेष तो जाएगा ही नहीं न कभी भी?

दादाश्री : अर्थात् द्वेष जाएगा ही नहीं। इसलिए हमने यह वीतराग विज्ञान देकर आपको वीतद्वेष बना दिया है।

प्रश्नकर्ता : भूख तो रोज़ लगती है, फिर ऐसा कैसे कहा जा सकता है कि वीतद्वेष हो गए?

दादाश्री : वह तो जब आप साइन्स (विज्ञान) को समझोगे तब उस दिन, अभी तो समझना बाकी है न! ये सभी समझकर बैठे हैं कि किसे भूख लगी है और किसे नहीं, वह सब जानते हैं। किसे भूख लगी है, आप सभी लोग वह समझकर बैठे हो न? जबकि वे (जिन्होंने ज्ञान नहीं लिया) तो ऐसा ही समझते हैं कि मुझे भूख लगी है।

यदि यह भूख नहीं लगती, प्यास नहीं लगती, तो ये साधु उपाश्रय से बाहर ही नहीं निकलते। राग तो बाद में उत्पन्न हुआ है। राग अर्थात् यह अच्छा और यह बुरा वह बाद का भाग है। मूल रूप से सबकुछ यहीं से उत्पन्न हुआ है। यदि उस जड़ को पकड़ लें तो काम बन जाएगा न!

अत: द्वेष तो... इस जीवन में जो कोई भी विषय हैं न, वे विषय दु:ख देते हैं। उस कारण उसे द्वेष होता है। अत: द्वेष से प्रयत्न करके, उसे बुझाने का प्रयत्न करता है। अच्छा-बुरा बाद में सीखा कि यह आम रत्नागिरी वाला है और यह वह वाला है। राग तो वह बहुत समय बाद सीखा। राग तो था ही नहीं। इस रत्नागिरी आम

की ज़रूरत कब पड़ती है? यदि दूसरे आम मिलते हों और ये आम मिलते ही नहीं हों, तब?

इन मनुष्यों की जो हाजतें हैं न, वे सभी द्वेष वाली हैं। राग बाद में उत्पन्न हुआ है। फिर तो छंटनी हुई कि यह इससे अच्छा है, उससे यह अच्छा है, उससे यह अच्छा है, उसके बजाय यह अच्छा है, लेकिन जब भूख लगी हो न, तब क्या वह अच्छा-बुरा कहता है?

वे सब हैं अशाता वेदनीय

हमें भूख लगी हो न, तो वह जो भूख होती है, उसे *अशाता* (दु:ख-परिणाम) वेदनीय कहा जाता है। अब बाहर से कोई *अशाता* वेदनीय नहीं करता। *अशाता* वेदनीय अर्थात् हमें अंदर द्वेष होता रहता है, नापसंदगी होने लगती है और जो कोई बीच में आए उसे धमका देते हैं। अब *अशाता* वेदनीय कुदरती रूप से होती है, किसी ने की नहीं है। देह धारण करने का दंड है। अत: द्वेष उत्पन्न होता है उससे। ये प्यास वगैरह सब *अशाता* वेदनीय के कारण लगती है। अत: जहाँ-जहाँ 'लगती है' शब्द आता है न, वह सब *अशाता* वेदनीय है। प्यास लगती है, भूख लगती है, नींद आने लगती है, थकान लगती है, लगती है, लगती है अर्थात् जो सुलगती हैं वे सब *अशाता* वेदनीय हैं। फिर नींद भी आने लगती है न? ये सब *अशाता* वेदनीय हैं और इसलिए द्वेष उत्पन्न होता है और द्वेष में से फिर *अशाता* वेदनीय के कारण खाने-पीने का ढूँढता है न? फिर, जो भी मिलता है, वही खा लेता है, उसे शांत करने के लिए उसके बाद जब पसंद करता है, वहाँ से राग उत्पन्न होने की शुरुआत हुई। अत: राग तो, एक-एक चीज़ हमारी ही पसंद है कि यह या यह या यह। जबकि द्वेष तो अनिवार्य है। भाई, खाए बगैर तो चलेगा ही नहीं न! तो सोए बगैर भी नहीं चलेगा! कोई सोने से रोके तो उसके प्रति क्या होता है हमें? राग होता है या द्वेष होता है?

प्रश्नकर्ता : एकदम द्वेष होता है।

दादाश्री : भूख लगी हो तब उसे रोकने पर क्या होगा? राग अर्थात् खुद को मनमानी, वह खुद का स्वतंत्र भाग है। द्वेष में स्वतंत्र है ही नहीं। इस बारे में शास्त्र पढ़ेगा या बारीकी से सोचेगा?

प्रश्नकर्ता : दादा, बारीकी से कैसे सोच पाएगा?

दादाश्री : शास्त्रों में पढ़ते हैं। जो शास्त्र लिखे गए हैं, उनमें तो सभी के लिए एक साथ दवाई रखी गई है। जिसे जो अनुकूल आए वह दवाई ले लेना। बेकार ही पत्नी को छोड़कर भाग मत जाना। जिसको ऐसा कर्म का उदय आए, वह छोड़े। कर्म का उदय नहीं हो तो फिर वैसा। (त्यागी) कर्म के उदय वाले को यहाँ पर सांसारिक बनाएँ न, तो तीसरे ही दिन भाग जाएगा।

द्वेष ही है प्रथम, उसके बाद राग

यदि खुद की स्त्री पर ज़रा सा भी द्वेष नहीं रहे न, तो स्त्री के प्रति राग होगा ही नहीं, ऐसा नियम है। अत: मजबूरन स्त्री पर राग करता है बेचारा। यह तो द्वेष होता है, इसलिए वह द्वेष ही उसे धक्का मारकर राग में डाल देता है। यदि द्वेष नहीं हो रहा हो न तो स्त्री पर राग होगा ही नहीं। वह ज़रा सा सोचने के बाद समझ जाता कि यह राग करने जैसी चीज़ है ही नहीं। भरत राजा की तेरह सौ रानियाँ थीं लेकिन राग हुआ होगा पर द्वेष नहीं हुआ होगा उन्हें! वीतद्वेष हो चुके थे, भरत राजा!

यह तो एक स्त्री को शादी करके लाया

और वह काली हो तब दूसरी किसी गोरी स्त्री पर उसे राग हो ही जाता है। अरे, तेरी पत्नी है न? तब कहता है, लेकिन गोरी नहीं है न! यानी गोरी नहीं हो, तो राग होता क्या उसे?

प्रश्नकर्ता : नहीं होता।

दादाश्री : बस, मुख्य कारण द्वेष ही है। स्त्री की ज़रूरत है। ये इन्द्रियाँ ऐसी हैं कि जब तक 'ज्ञान' नहीं हो जाए तो उसे स्त्री की, सभी चीज़ों की ज़रूरत है।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान होने के बाद ज़रूरत नहीं है?

दादाश्री : ज्ञान होने के बाद में फिर ज़रूरत नहीं है। अत: सिर्फ स्त्री के प्रति होने वाला विषय-विकार रुक जाता है। बाकी सब, खाने-पीने की तो ज़रूरत पड़ती है अंत तक, देह जीवित है तब तक।

बच्चे, पूर्व के द्वेष के परिणाम स्वरूप

यदि तुझे पत्नी व बच्चों के प्रति द्वेष नहीं होगा तो राग उत्पन्न ही नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : वह किस प्रकार से? जो चीज़ पसंद हो, जिस पर राग हो, उसके प्रति द्वेष हो सकता है?

दादाश्री : द्वेष ही है, तभी राग होता है न! द्वेष के बिना राग नहीं हो सकता।

प्रश्नकर्ता : क्या ऐसा है कि पहले द्वेष होता है?

दादाश्री : द्वेष के बिना राग हो ही नहीं सकता। राग में से द्वेष और द्वेष में से राग। बच्चे को जब दवाई पिलाने लगें तब वह यों फूँक मारकर आपकी आँखों में डाल दे तो?

प्रश्नकर्ता : तो द्वेष होता है।

दादाश्री : तब द्वेष होता है। अत: पहले द्वेष चला जाए तो फिर राग चला जाएगा। अभी आपका द्वेष चला गया है। किसी पर द्वेष नहीं होता लेकिन राग तो रहेगा लेकिन वह *निकाली* राग है! यहाँ (महात्माओं को) तो *निकाली* द्वेष भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : मुझे अभी तक यह ठीक से समझ में नहीं आया कि द्वेष में से राग होता है। बच्चे को देखकर सब से पहले तो राग ही होता है न हमें।

दादाश्री : जहाँ द्वेष हुआ हो वहीं पर राग होता है, वर्ना राग हो ही नहीं सकता।

प्रश्नकर्ता : पूर्व जन्म के किसी कर्म के कारण द्वेष हुआ होगा?

दादाश्री : उसी के परिणाम स्वरूप यह राग होता है। उस पर बहुत ही द्वेष रहा होगा न तो इस बार बेटे के यहाँ बेटा बनकर गोदी में खेलने आता है और फिर वह उसे चूमता है। अरे भाई, यह तो पसंद नहीं था न, तो क्यों चूम रहा है?

राग में से द्वेष, द्वेष में से राग

क्लेश का कारण द्वेष है। अतिशय राग हो जाए तब नापसंदगी हो जाती है। कुछ हद तक का परिचय राग में परिणमित होता है और 'रिज पोइन्ट' आने के बाद जब आगे बढ़ते हैं तो द्वेष में परिणमित होता है। जब द्वेष होता है, उसी समय राग के कारणों का सेवन होता है और इन सभी की जड़ में जो राग-द्वेष हैं, वे 'इफेक्ट' हैं और जो अज्ञान है, वह 'कॉज़' है!

प्रश्नकर्ता : एक जगह आप्तवाणी में पढ़ा

है कि राग से द्वेष के बीज डलते हैं और द्वेष से राग के बीज डलते हैं, यह ज़रा समझाइए, ऐसा कैसे होता है?

दादाश्री : क्यों? वर्ना क्या लगता है आपको?

प्रश्नकर्ता : द्वेष में से राग, वह बात समझ में आती है लेकिन राग में से द्वेष समझ में नहीं आ रहा।

दादाश्री : क्या समझ में आया, द्वेष में से राग में?

प्रश्नकर्ता : आपने ऐसा कहा था कि मुझे इनका चेहरा भी नहीं देखना है और फिर वही पुत्र के रूप में पैदा होता है।

दादाश्री : तब चूमता रहता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इसका अर्थ यही हुआ न कि द्वेष में से राग उत्पन्न हुआ?

दादाश्री : दोनों आमने-सामने ही हैं। राग, द्वेष को उत्पन्न करता है और द्वेष, राग को उत्पन्न करता है। वीतरागों को ये स्पर्श नहीं करते।

प्रश्नकर्ता : राग में से द्वेष कैसे उत्पन्न होता है, वह ज़रा समझाइए।

दादाश्री : आपको बहुत राग हो लेकिन फिर भी जब उसकी अति हो जाती है तब द्वेष होने लगता है।

प्रश्नकर्ता : अति होने से द्वेष होता है, यह एक सिद्धांत हुआ लेकिन उस सिद्धांत को उदाहरण देकर समझाइए न!

दादाश्री : रोज़ घर में कलह है, उसका कारण यही है। उसका कारण राग है। उसकी जब अति हो जाती है तब द्वेष होता है। हर रोज़ राग करने के परिणाम स्वरूप यह द्वेष होता है।

प्रश्नकर्ता : एक स्त्री को अपने पति के प्रति बहुत ही राग हो तो फिर उनके बीच तकरार होगी?

दादाश्री : हाँ, फिर यदि वह कहीं बाहर जाए और लौट न पाए तो चिढ़ती रहेगी। वीतराग को कुछ नहीं होता। सिर्फ राग वालों के बीच झगड़े होते ही रहते हैं।

प्रश्नकर्ता : बहुत राग हो तो होते हैं, वह बात सही है।

दादाश्री : कम हो तब भी होता है, यह तो।

प्रश्नकर्ता : कम है तो थोड़ा बहुत होता है जबकि उसमें ज़्यादा होता है।

दादाश्री : लेकिन होता रहता है ज़रूर। एक भाई को अपने बच्चे पर बहुत राग था, इकलौता बेटा था। वह भाई छः महीने बाद मुंबई से आया, तो बेटा 'पापा जी, पापा जी' कहने लगा तो उन्होंने उसे एकदम गोद में उठा लिया। उठाकर उसे ऐसा दबाया कि बच्चा बहुत दब गया तब उसने काट लिया। अतिरेक से बिगड़ जाता है सबकुछ। सबकी हद सीख लेनी चाहिए। सही अनुपात में (बेलेन्स) करते-करते वीतराग होते जाएँगे। धीरे-धीरे अनुपात (लिमिट) में लाते-लाते वीतराग हो सकते हैं। बच्चा काट लेगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, हाँ, काट लेगा।

दादाश्री : वह सही था या बच्चा सही था?

प्रश्नकर्ता : बच्चे ने सही किया। हाँ, ठीक है।

दादाश्री : फिर भी ये भाई बार-बार दबाते रहते हैं, उसे!

प्रश्नकर्ता : बहुत राग किया तो उसमें उस बच्चे को द्वेष हो गया।

दादाश्री : नहीं, अर्थात् बहुत राग हुआ इसलिए द्वेष हुआ। फिर जब उसने काट लिया तो पिता को द्वेष हो गया और बेटे को उतारकर मारा। तब भी वह बाप समझ नहीं पाया। बेटे को ज़्यादा दबाया। वह तो ऐसा समझा कि मैंने प्रेम किया, फिर भी इसने काट लिया!

ऐसी है यह सारी दुनिया! अंधे लोग अंधेरे में चल रहे हैं। लेकिन क्या हो सकता है? अत: मैंने जो चश्मे दिए हैं, उन्हें पहनकर चलना आराम से, मज़े से। चश्मे तो अच्छे हैं, ठोकर नहीं लगती न?

दुनिया को जो बातें कभी भी स्पष्ट नहीं हो सकती थीं, वैसा स्पष्टीकरण दिया है मैंने। सूक्ष्म से सूक्ष्म बाबत का।

अक्रम विज्ञान ने बनाया वीतद्वेष

सिर्फ 'वीतराग' ही कहा गया है। अर्थात् अपने यहाँ पर ज्ञान देते ही पहले द्वेष चला जाता है, हर किसी का। कोई गालियाँ दे तो भी उसके साथ 'समभाव से *निकाल*' करता है लेकिन द्वेष नहीं करता। ऐसा आपको अनुभव हुआ है थोड़ा बहुत? पूरा-पूरा अनुभव हुआ है?

प्रश्नकर्ता : निरंतर अनुभव होता है।

दादाश्री : गालियाँ देते हैं तब भी! वर्ना गाली का तो क्या परिणाम आता है? वह गालियाँ दे तब क्या होता है? द्वेष होता है या राग?

प्रश्नकर्ता : द्वेष ही होता है। इस ज्ञान के बाद तो द्वेष करने योग्य जगह हो वहाँ पर भी अब द्वेष नहीं होता।

दादाश्री : द्वेष हो, ऐसे व्यक्ति के घर पर छोड़ दिया जाए तब भी द्वेष नहीं हो, तब समझना कि यह वीतराग बनने लायक हो गया!

द्वेष की जगह पर द्वेष होने लगे, वह तो मीनिंगलेस (व्यर्थ) चीज़ है। आपको अब पहले जैसा द्वेष नहीं होता न किसी जगह पर?

प्रश्नकर्ता : एक जगह पर होता है।

दादाश्री : एक जगह में हर्ज नहीं। एक ही जगह हो तब तो वह मुझे सौंप देना लेकिन बाकी सभी जगह पर, पूरी दुनिया में किसी भी जगह पर द्वेष नहीं होता न? एक जगह पर आपको जो होता है, वह तो आपकी दृष्टि की भूल है, समझने में भूल है। वास्तव में तो वहाँ पर भी नहीं होता और बाकी जगहों पर नहीं होता है न? यानी किसी भी जगह पर द्वेष नहीं होता है न?

प्रश्नकर्ता : नहीं, कहीं पर भी नहीं।

दादाश्री : मोटर में आपके साथ चार लोग बैठे हुए हों और उनमें से एक भाई आपसे कहे कि, 'पाँच मिनट दर्शन करके आता हूँ', तो आप चार लोग बैठे-बैठे, जो गया, उसे गालियाँ दोगे? क्या करेंगे आप?

प्रश्नकर्ता : वह तो जो संयोग आया, उसे देखना है। अत: उसमें द्वेष तो होगा ही नहीं न हमें।

दादाश्री : नहीं, लेकिन आप क्या करोगे? समभाव से *निकाल* करोगे? फिर उन पर द्वेष नहीं करोगे न, आधा-पौना घंटा हो जाए तब भी?

प्रश्नकर्ता : हाँ, तब भी द्वेष नहीं होगा।

दादाश्री : ऐसा वीतद्वेष बना दिया है आपको।

अत: मैंने आपको कौन से ज्ञान पर रख दिया है? आपका द्वेष बिल्कुल निकल गया है। अर्थात् मैंने आपके राग को नहीं रोका है। मैंने आपसे कहा है, 'हाफूस के आम, रस-रोटी वगैरह सब खाना-पीना। कपड़े पहनना, सिनेमा देखने जाना!' क्यों कहा है? आपको उस पर बैर नहीं है इसलिए। मैंने आपका द्वेष बंद करवा दिया है, इसलिए पूरे दिन आप संयम में रहते हो। इस द्वेष के कारण ही सारा असंयम है। पूरे दिन राग नहीं रह सकता मनुष्य को, द्वेष ही रहता है!

अत: ऐसा है न, यदि द्वेष का परिणाम कम हो जाए न, तो राग रहने में हर्ज नहीं है। अभी आपको वीतद्वेष बनाने के बाद छोड़ दिया है, फिर भी आपको कोई वीतराग नहीं कहेगा लेकिन आपने कहाँ तक प्राप्त कर लिया है? वीतद्वेष हो गए हो। आपके आर्तध्यान और रौद्रध्यान बंद हो गए हैं। ये आर्तध्यान और रौद्रध्यान, ये द्वेष हैं। आर्तध्यान और रौद्रध्यान वे द्वेष कहलाते हैं या राग कहलाते हैं? द्वेष हैं ये तो। जहाँ पर राग है, वहाँ पर क्या रौद्रध्यान हो सकता है? राग है उस समय रौद्रध्यान नहीं हो सकता। जहाँ द्वेष है, वहाँ रौद्रध्यान होता है।

वीतद्वेष क्यों नहीं?

वीतद्वेष हो गए हो लेकिन वीतराग नहीं हुए हो न! उसके बाद यह राग जाएगा। अब यह राग किस तरह से जाएगा? ऐसा है न, कड़वा तो छोड़ देते हो और कड़वे पर आप द्वेष छोड़ देते हो लेकिन मीठा छोड़ने में आपको देर लगेगी और उसके प्रति जो राग है, उसे जाने में भी देर लगेगी। कड़वा छोड़ देना हर किसी को आता है और मीठा छोड़ना?

प्रश्नकर्ता : उसमें देर लगती है, ठीक है।

दादाश्री : अब इसलिए ऐसा कहा है कि कड़वा छूट गया है, वही सब से बड़ा जोखिम था, द्वेष का।

प्रश्नकर्ता : अत: मूलत: द्वेष में से उत्पन्न हुआ है?

दादाश्री : मूलत: द्वेष में से ही उत्पन्न हुआ है यह सब और उससे भी आगे जाएँ तो बैर में से उत्पन्न हुआ है। अत: मैत्री हो जाए तब काम होगा, वर्ना जब तक बैर रहेगा, तब तक द्वेष बाँधेगा। चौबीस तीर्थंकरों की इतनी सी, यह एक ही बात समझ जाए तो जगत् का कल्याण हो जाएगा। यही एक बात, चौबीस तीर्थंकरों की कि, 'वीतद्वेष बनो!'

प्रश्नकर्ता : बहुत बड़ी बात है।

दादाश्री : हाँ, बहुत गहरी बात है। कभी-कभी ही ऐसी बात निकल जाती है। वीतद्वेष और वीतराग! वीतद्वेष शब्द तो दुनिया ने सुना ही नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : और जब जाता है तब पहले द्वेष जाता है और उसके बाद राग जाता है।

दादाश्री : हाँ, पहले द्वेष जाता है। पहले द्वेष जाना ही चाहिए। वह नहीं जाएगा, तो फिर मोक्ष नहीं होगा। चाहे कितने ही राग खत्म करोगे तो भी कुछ बदलेगा नहीं।

वीतद्वेष के बाद रहा डिस्चार्ज राग

प्रश्नकर्ता : राग हो तो बाद में द्वेष होता है। राग लोभ का पर्याय है और सब से अंत में जाता है। इसलिए ऐसा भी हो सकता है कि राग हो लेकिन द्वेष न रहे, लेकिन जहाँ पर राग नहीं

है वहाँ पर द्वेष नहीं है। राग मुख्य है, उसका क्षय होने पर संपूर्ण आत्मस्वरूप अर्थात् मोक्ष प्राप्त होता है, यह समझाइए।

दादाश्री : द्वेष का स्वभाव कड़वा है इसलिए कड़वा भाव छूट जाता है और राग मीठा है इसलिए रह जाता है। जो कड़वा है वह अच्छा नहीं लगता लेकिन अब एक बार घुस गया है तो वह कर भी क्या सकता है? लेकिन जब ज्ञान मिलता है तब या फिर उसकी दृष्टि बदल जाए, आत्मदृष्टि हो जाए तब। आत्मदृष्टि होने से द्वेष खत्म हो जाता है क्योंकि वह कड़वा है इसलिए। यदि मीठा होता तो खत्म ही नहीं होने देता उसे! अतः राग अंत तक रहता है।

प्रश्नकर्ता : दादा, आप जब यह ज्ञान देते हैं तब ये जो राग और द्वेष हैं, उनमें से द्वेष तो उसी क्षण खत्म हो जाता है, ऐसा कैसे होता है?

दादाश्री : वह द्वेष पहले ही खत्म हो जाता है, क्योंकि पापों का नाश हो जाता है इसलिए। उसके बाद सिर्फ राग बचता है। वह राग भी धीरे-धीरे कम होता जाता है और वह राग भी डिस्चार्ज भाव से है, चार्ज भाव से नहीं है। धीरे-धीरे-धीरे कम होता जाता है और अंत में वीतराग कहलाता है। जब राग भी चला जाता है तब वीतराग कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : दादा, यदि राग डिस्चार्ज के रूप में ही है तो फिर द्वेष भी डिस्चार्ज के रूप में रहता है या नहीं?

दादाश्री : नहीं, द्वेष तो चला ही जाता है। द्वेष रहे तो नए कर्म बंधेंगे। जब तक द्वेष रहता है तब तक चिंता होती है। यहाँ तो एक भी चिंता नहीं होती। उसका क्या कारण है कि द्वेष खत्म हो जाता है, पहले ही दिन!

प्रश्नकर्ता : पहले दिन नहीं, उसी क्षण खत्म हो जाता है।

दादाश्री : अतः वह उसी क्षण जितेन्द्रिय जिन हो जाता है। सभी इन्द्रियों को जीत लिया है इसलिए उसी क्षण जितेन्द्रिय जिन हो जाता है। अर्थात् वीतद्वेष हो जाता है, सभी इन्द्रियों को जीत लेता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन द्वेष तो डिस्चार्ज भाव से रहता या नहीं?

दादाश्री : नहीं।

प्रश्नकर्ता : नहीं रहता। यों अनुभव से ऐसा दिखाई देता है कि जिन्हें हम अपना दुश्मन समझते हैं, उनके प्रति दुश्मनी नहीं रहती।

दादाश्री : रहती ही नहीं, वीतद्वेष हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : अपना द्वेष तो चला जाता है लेकिन सामने वाले का द्वेष भी चला जाए, उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : प्रतिक्रमण करते रहना चाहिए। द्वेष में से राग उत्पन्न हुआ, दोनों के बीच कारण-कार्य का संबंध है। अतः द्वेष नहीं होता इसलिए सभी कारण बंद हो गए, वीतद्वेष!

प्रश्नकर्ता : फिर दादा, राग तो रहता है। स्त्री है, बच्चे हैं, ऑफिस है, व्यापार है तो फिर राग तो रहा न? क्या वह राग डिस्चार्ज कहलाएगा?

दादाश्री : वह राग डिस्चार्ज के रूप में है। वास्तव में चार्ज के रूप में राग कहाँ पर होता है? जब यह भान रहे कि 'मैं चंदूभाई हूँ', तब वास्तव में राग है। लेकिन ऐसा भान हुआ कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ', तो उस क्षण से वास्तविक राग नहीं रहता, डिस्चार्ज के रूप में रहता है।

अटैक गया, वह भगवान हो गया

धर्म तो किसे कहते हैं कि किसी भी संयोग में राग-द्वेष न हो, उसी को धर्म कहते हैं। भले ही राग हो लेकिन द्वेष तो होना ही नहीं चाहिए। जबकि वे तो (जिन्होंने ज्ञान नहीं लिया) फुफकारते हैं।

इतना ही देख लेना है कि अटैक (करने का विचार) नहीं होता न और जब अटैक के विचार आएँ, तब मुझसे कह देना कि मुझे अटैक करने के विचार आ रहे हैं। वे विचार भले ही आते हों लेकिन वह तेरा खुद का अटैक नहीं है न? तो कहता है, नहीं, नहीं है। तो फिर कोई बात नहीं।

शास्त्र कहते हैं कि तेरे भाव में अटैक नहीं है तो तू महावीर ही है। जब से मेरे अटैक बंद हो गए, तभी से मैं अपने आपको महावीर ही मानता था। बस इतना ही, कि मैं कहता नहीं था। जो भगवान ने बताई है यह वही चीज़ होगी, मेरे पास अन्य कोई चीज़ ढूँढने की रही ही नहीं। इस दुनिया में ऐसा व्यक्ति ढूँढ निकालो जिसने अटैक करना बंद कर दिया हो, ऐसा हो ही नहीं सकता। ज़रा सा यों 'मेरेकु', 'हमकु', यह 'हमकु' की वजह से भाई यहाँ से छूट नहीं सकता। 'हमकु' टल जाएगा न, तो पूरी दुनिया ही टल जाएगी।

राग-द्वेष के भोगवटे का हिसाब

प्रश्नकर्ता : जिस पर राग हो, वही फिर द्वेष से भुगतना पड़ता है और जिस पर द्वेष है, वही फिर राग से भुगतना पड़ता है, ज़रा इस सूत्र को समझाइए।

दादाश्री : राग तो कभी भी यों ही नहीं हो जाता। राग तो, जब कोई झटका वगैरह लगे न, तब होता है। किसी मित्र के साथ किसी बात पर बोलचाल बंद हो जाए और छः-बारह महीनों तक बोलना बंद रहे तो बहुत राग होने लगता है उसमें और जब वापस उससे बोलना शुरू करते हैं, तब वे लोग गले लग जाते हैं! अब द्वेष से बोलना बंद किया था और अब द्वेष में से इतना राग हो गया, कि अंत में गले लगकर मित्रता की, तो इतनी अधिक एकता हो जाती है कि पूछो मत! इसी प्रकार यह सारी दुनिया चल रही है।

जहाँ आपका हिसाब है वहीं पर आकर्षण होता है। राग किसे कहते हैं कि हम खुश होकर आकर्षण पैदा करते हैं। और यह राग नहीं है, इसका क्या कारण है कि आपकी इच्छा नहीं है फिर भी आकर्षण होता है। ऐसा होता है या नहीं होता?

प्रश्नकर्ता : होता है, होता है।

दादाश्री : तो वह राग नहीं कहलाएगा। राग में तो खुद की इच्छानुसार होता है और अब खुद की इच्छा नहीं है। हमने यह ज्ञान दिया उसके बाद से इन सभी की पत्नियाँ हैं, पर वह बगैर इच्छा के होना चाहिए, जितना आकर्षण है सिर्फ उतना ही!

द्वेष विकर्षण है और राग आकर्षण है। आकर्षण-विकर्षण होते ही रहते हैं, वह *पुद्गल* का स्वभाव है। आत्मस्वभाव वैसा नहीं है। राग-द्वेष कम करने के लिए 'वीतरागों के विज्ञान' को जानने की ज़रूरत है।

आज्ञा के पुरुषार्थ से वीतरागता

प्रश्नकर्ता : वीतरागता, वह आत्मपुरुषार्थ द्वारा अचीव (सिद्ध) की हुई स्थिति है या कुदरती रचना का अंश है?

दादाश्री : वह आत्मपुरुषार्थ से प्राप्त की गई स्थिति है। कुदरती रचना का अंश नहीं है।

कुदरती रचना में तो नींबू होते हैं, अमरूद होते हैं, अनार होते हैं, वीतरागता नहीं होती। किसी जगह पर वीतरागता का पेड़ नहीं है, कि उसका फल हर बार एक जैसा ही आएगा।

प्रश्नकर्ता : यानी कुदरती रचना में ऐसा कोई संयोग खड़ा होगा और हम वीतराग हो जाएँगे या फिर पुरुषार्थ से ही हुआ जा सकता है?

दादाश्री : नहीं, कुदरती रचना का इससे कोई लेना-देना है ही नहीं। पुरुषार्थ के बिना वीतरागता नहीं आ सकती क्योंकि प्रकृति और पुरुष दोनों को अलग हो जाने के बाद आप जितना इन आज्ञाओं में रहने का पुरुषार्थ करोगे उतनी ही वीतरागता उत्पन्न होगी। प्रकृति और आत्मा के अलग हुए बिना तो आत्मपुरुषार्थ हो ही नहीं सकता। दूसरा, इस संसार के लोगों का जो पुरुषार्थ है, वह भ्रांत पुरुषार्थ है।

'ज्ञानी पुरुष' से आत्मा-अनात्मा की लक्ष्मण रेखा समझ लेनी चाहिए। उनके द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण तीनों ही काल में सत्य होते हैं। लाखों साल बाद भी 'प्रकाश' वही का वही रहता है! जब से ज्ञानी पुरुष से मिले, तभी से वीतद्वेष बना दिया है। उसके बाद जैसे-जैसे फाइलों का *निकाल* होगा तो वीतराग होते जाओगे और सभी फाइलों का *निकाल* हो गया वह वीतराग हो गया। ऐसे ज्ञानी पुरुष संपूर्ण वीतराग होते हैं। एक-दो अंश की ज़रा कमी रहती है, बाकी संपूर्ण वीतराग!

जैसे-जैसे वीतरागता बढ़ती जाती है, उतनी ही राग-द्वेष रहितता आती जाती है और उतना ही हमें मोक्ष समझ में आता जाता है। पूर्ण दशा उत्पन्न होती जाती है। संपूर्ण वीतरागता, उसी को भगवान कहते हैं। देखें-जानें लेकिन राग-द्वेष न हों, उसी को वीतराग चारित्र कहते हैं! जिसे वीतराग ही होना है, उसे कौन रोक सकता है? राग-द्वेष करता ही नहीं, तो उसे कौन रोक सकता है?

ज्ञान मिलते ही हुए वीतद्वेष

प्रश्नकर्ता : ये जो वीतराग हैं, उन्हें राग ही नहीं होता लेकिन आपके प्रति हमें राग है।

दादाश्री : मेरे प्रति राग रखने में हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : इसलिए यहाँ आने का मन हो जाता है।

दादाश्री : मेरे प्रति तो राग रहेगा ही।

प्रश्नकर्ता : तो वीतराग अर्थात् क्या?

दादाश्री : वीतराग अर्थात्, वीतराग को वास्तव में देखा जाए तो, ऐसा कहना चाहिए कि वीतराग-द्वेष। लेकिन वीतराग क्यों कहते हैं? तो वह इसलिए, कि उन्हें जब आत्मा की जागृति होती है, सम्यक् दर्शन होता है, क्षायक सम्यक् दर्शन, उस समय वे वीतद्वेष तो हो ही जाते हैं। हम जब आपको ज्ञान देते हैं न, तब वीतद्वेष अर्थात् आपमें से द्वेष नाम की चीज़ निकल जाती है।

द्वेष चला जाता है। अतः क्रोध होने पर वह आपको अच्छा नहीं लगता। किसी के प्रति तिरस्कार होता है तो वह अच्छा नहीं लगता। वह सब, जिसे द्वेष कहा जाता है, जिसे तिरस्कार कहते हैं, वह नहीं होता। अतः वीतद्वेष तो हो चुके हो।

प्रशस्त राग, वह वीतरागता का कारण

राग का फल मूर्च्छा है और द्वेष का फल भय। ये दोनों चले जाएँगे तब वीतराग हो जाएगा। तब तक वीतराग नहीं हो सकता। अपने महात्मा वीतराग होने की तैयारी कर रहे हैं। कोई पूछे कि इनमें से कुछ हुए हैं? तो कहेंगे, 'हाँ हुए तो हैं। वीतद्वेष हुए हैं'।

अब, वीतराग होना है। दो (राग-द्वेष) थे, उनमें से एक कम हो गया। तो कहते हैं, 'वीतद्वेष होने के बाद राग कहाँ रहा?' तो कहते हैं ज्ञानी पर राग होता है। ज्ञानी पर, महात्माओं पर, यानी इस संसार पर से राग उठ गया और यहाँ बैठ गया। लेकिन यह राग प्रशस्त राग कहलाता है'। यह प्रशस्त राग वीतरागता का कारण है। सिर्फ यही राग ऐसा है कि जो वीतराग बनाता है। अपने इन सभी महात्माओं पर आपको राग है या नहीं है?

प्रश्नकर्ता : है।

दादाश्री : जो ज्ञानी पुरुष पर होता है, महात्माओं पर होता है, वह राग हितकारी राग कहा जाता है। उस प्रशस्त राग का फल क्या है? तब कहते हैं, 'वीतराग'। इसका फल ही वह आएगा। अपने आप, बाकी कुछ नहीं करना है, इसका ही फल। आपने बीज बोया है, मक्के का दाना बोया, पानी डाला, सब डाला, फिर भुट्टा अपने आप लगता है न कि आपको बनाना पड़ता है?

प्रशस्त राग अर्थात् सर्व दु:खों से मुक्त करवाने वाला राग। सर्व दु:खों का, सांसारिक दु:खों का अभाव करवाने वाला वह राग। यानी आपका द्वेष छूट गया है लेकिन आपका राग नहीं छूटा है। वह राग जो सभी जगह चिपका हुआ है न, वह वहाँ से मुझ पर आ जाता है। वह राग दु:खदाई लगता है। इसलिए कहता है, 'दादा पर जो राग है, वह?' वह तो प्रशस्त राग कहलाता है। जो राग प्रत्यक्ष मोक्ष का कारण है! और ज्ञानी पुरुष पर राग हो जाए तो अच्छा है न! फिर सारी झंझट छूट जाएगी!

कृपालुदेव ने तो इसका ताल मिला दिया कि 'सत्पुरुष ही तेरा आत्मा है'। अर्थात् यह पानी भी वहीं पर जाता है! सभी तरह से ताल मिल जाते हैं!

प्रशस्त राग वही इस काल का मोक्ष

यह जो प्रशस्त राग है, वह वीतद्वेष कहलाता है लेकिन वीतराग नहीं कहलाता। वीतराग तो, जब यह प्रशस्त राग भी खत्म हो जाएगा उसके बाद में आएगा। प्रशस्त राग तो इस काल में बहुत हितकारी है। यह प्रशस्त राग रहे न, तो समझना कि अपना मोक्ष हो गया। क्योंकि यह सभी रागों को तोड़ देता है। बाहर के सभी मौज-मज़े, सभी रागों को तोड़ देता है यह राग। अत: यह जो प्रशस्त राग उत्पन्न हुआ है, इसे इस काल में मोक्ष कहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : प्रशस्त राग का कार्य क्या है?

दादाश्री : तब कहते हैं; प्रशस्त राग दूसरी जगहों से, विनाशी चीज़ों पर से राग उठा देता है और जिनमें अविनाशी तत्त्व प्रकट हुआ है उन पर अर्थात् ज्ञानी पुरुष पर राग होने से उसका जल्दी हल आ जाता है।

प्रशस्त राग बैठने के बाद, वह बैठा हुआ राग फिर उखड़ जाता है। यह राग होने के बाद फिर उखाड़ देना है, चूल्हा जलाकर, खाना बनाने के बाद बुझा देना है। खाना बन जाने के बाद बुझाना नहीं पड़ता?

प्रश्नकर्ता : हाँ, बुझाना पड़ता है।

दादाश्री : तो कहेंगे, बुझाना था तो जलाया क्यों। प्रशस्त राग बैठाया न, तो उसे उठाना पड़ा। आपका बैठा नहीं है, आपको बिठाना है। बैठ जाएगा तो फिर बाहर का राग बंद हो जाएगा, खत्म हो जाएगा! फिर यह राग बैठने के बाद फिर इसमें से निकालना है, उखाड़ लेना है। यह हल ला देगा।

सबसे उत्तम प्रशस्त राग

प्रश्नकर्ता : हमें आपके प्रति अत्यंत भाव हो जाता है तब आपके लिए बावरापन हो जाता है तो ऐसा करने से जो मूल वस्तु प्राप्त करनी है, वह एक तरफ नहीं रह जाएगी?

दादाश्री : नहीं, नहीं, बावरापन उत्पन्न नहीं होता। बावरापन आपको, खुद को समझ में आता है न, खुद आत्मा है, फिर क्या बावरापन समझ में नहीं आएगा?

प्रश्नकर्ता : गौतम स्वामी के साथ क्यों ऐसा हुआ था?

दादाश्री : वह हुआ था लेकिन उसकी वजह से ज्ञान में विलंब हो सकता है लेकिन ज्ञान चला नहीं जाता। ज्ञान में विलंब हो सकता है लेकिन वह प्रशस्त राग कहलाता है। प्रशस्त राग का फल क्या है? वीतरागता। यह जो सांसारिक राग है न, उसका फल राग-द्वेष है।

अत: वीतद्वेष होने के बाद कौन सा राग बचता है? तब कहते हैं, प्रशस्त राग बचता है। जो राग मोक्ष का प्रत्यक्ष कारण है। उसमें सांसारिक राग का छींटा तक नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : क्या प्रशस्त राग आसानी से खत्म हो जाता है?

दादाश्री : उसमें हर्ज नहीं है। प्रशस्त राग न जाए तो भी हर्ज नहीं है। क्योंकि वह मोक्ष दिलाकर ही दम लेता है। अत: इस बारे में कोई चिंता नहीं करनी है। प्रशस्त राग, जैसा गौतम स्वामी को महावीर भगवान के प्रति था। वह अभी नहीं हो रहा है तो कुछ समय बाद अपने आप ही विलय हो जाएगा, विलय होता ही रहेगा।

प्रश्नकर्ता : उससे तो उनका मोक्ष रुक गया, गौतम स्वामी का।

दादाश्री : उसे क्या 'रुकना' कहा जाएगा? छ: या बारह साल बाद होगा, पंद्रह साल बाद होगा, अगले जन्म में हो जाएगा। इस प्रशस्त राग का डर नहीं है, सांसारिक राग का डर है। प्रशस्त राग चाहे कितना भी हो, उसका भय रखने जैसा नहीं है।

प्रश्नकर्ता : प्रशस्त राग की वजह से केवलज्ञान नहीं हो सकता न?

दादाश्री : हमें केवलज्ञान की क्या जल्दी है? कहते हैं, 'तुझे आना हो तो आना'। ऐसा है न, हम ट्रेन में बैठ गए हैं! केवलज्ञान तो सब से अंतिम स्टेशन है, अपने आप आएगा। उसकी क्या जल्दी है? केवलज्ञान तो हाथ में आ ही गया, ऐसा है। जब से स्पष्ट वेदन हुआ है न, तभी से वह केवलज्ञान कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञान नहीं लेकिन ज्ञान तो रुक जाता है न?

दादाश्री : नहीं, ज्ञान तो नहीं रुकता। ज्ञान तो बल्कि बढ़ता है। ऐसा है न कि ऐसा किसे होता है? बाहर बहुत ही उलझन में पड़ा हुआ व्यक्ति हो न, उसे ऐसा होता है। तब फिर वे उलझनें सुलझ जाती हैं और एक ही दृष्टि हो जाती है। हर एक को ऐसा नहीं होता। जो बाहर दुनिया में बहुत डूब चुका है, बाहर बहुत जगहों पर उसका चित्त चिपका हुआ हो न तो जब यहाँ पर चिपकता है तो बाहर सभी जगह से उखड़ जाता है। अहितकारी नहीं है यह। इसे प्रशस्त राग कहा गया है। ज़्यादातर यह राग तो उत्पन्न ही नहीं होता। हो जाए तो उत्तम कार्य करता है।

प्रश्नकर्ता : क्या ज्ञानी पर प्रशस्त राग के अलावा पौद्गलिक राग भी उत्पन्न हो सकता है?

दादाश्री : पौद्गलिक राग, वह तो हमेशा उखड़ ही जाता है। वह राग चिपकता है, *पुद्गल* से चिपकता है लेकिन फिर उखड़ जाता है, अंत में फिर प्रशस्त राग के रूप में ही रहता है। ऐसा हुआ है, पहले भी हुआ ही है न! यह कोई नई चीज़ नहीं है।

ऐसा होता है लेकिन अंत में बाकी सभी जगहों से छूट जाता है। बाकी सभी जगह जो झाड़ियाँ होती हैं न सारी, उन सब में से छूट जाता है और एक ही जगह पर आ जाता है। इसलिए इसे लोगों ने सब से अच्छा साधन माना है, प्रशस्त राग को। बाकी सब झाड़ियाँ वगैरह सबकुछ उखड़ जाता है।

निरंतर भूलाया न जा सके, वह प्रशस्त राग

पहले वीतद्वेष हो जाते हैं, उसके बाद वीतराग होते हैं। वीतद्वेष उत्पन्न होने के बाद सिर्फ राग बचता है। राग बाद में ही जाता है, ऐसा उसका स्वभाव है। क्योंकि जब आखिर में *पुद्गल* में से जब राग निकल जाता है तो वह ज्ञानी पुरुष पर आ जाता है। लेकिन वह राग भी कैसा? प्रशस्त राग। जिन ज्ञानी ने ज्ञान दिया उन ज्ञानी पर राग या फिर उन्होंने शास्त्र बताए हों तो शास्त्रों पर राग। अत: आत्मा से संबंधित जो साधन हैं, उन पर जो राग रहता है, वह प्रशस्त राग है। और वह राग धीरे-धीरे कम होते-होते अंत में जब खत्म हो जाता है तब वीतराग हो जाता है। जो राग ज्ञानी पुरुष और बाकी सब पर आ जाता है, अंत में वह भी निकालना तो पड़ेगा ही न कभी न कभी?

प्रश्नकर्ता : तो ऐसा नहीं है दादा कि जहाँ राग होता है वहाँ पर द्वेष होता है?

दादाश्री : वह पौद्गलिक राग होगा तो द्वेष होगा। इसे प्रशस्त राग कहा जाता है, इसमें उसे द्वेष नहीं रहता। प्रशस्त राग, वह द्वेष वाला नहीं होता। यह राग अद्भुत राग है और यही राग मोक्ष दिलवाता है। प्रशस्त राग तो ज्ञानी पुरुष के प्रति होता है।

प्रश्नकर्ता : प्रशस्त राग का शब्दार्थ क्या है, वह समझाइए।

दादाश्री : वह तो बहुत उच्च प्रकार का राग है। वह ऐसा राग कहलाता है जिससे बंधन नहीं होता। जिसके फलस्वरूप बंधन नहीं आता। बाकी सभी प्रकार के राग से बंधन होता है, यह राग मुक्ति दिलवाता है।

प्रश्नकर्ता : वह राग नहीं लेकिन प्रेम है।

दादाश्री : वह प्रेम भी प्रशस्त राग कहलाता है। वह यदि हो गया तो काम हो जाएगा। दादा कभी भी भुलाए न जा सकें, वह है प्रशस्त राग। दादा कभी भी भुलाए न जा सकें, ऐसा होता है किसी को? उँगली उठाओ, देखते हैं। एक-दो-तीन... सभी को होता है ऐसा! क्या बात है! ये कभी भी भुलाए नहीं जा सकते। दादा को नहीं भुलाया तो वह आत्मा को न भुलाने के बराबर है। क्योंकि ज्ञानी पुरुष वही खुद का आत्मा है।

प्रश्नकर्ता : आपके पास न आएँ तो लगता है कि कुछ कमी है।

दादाश्री : जब तक खुद के आत्मा का स्पष्ट अनुभव नहीं है तब तक ज्ञानी पुरुष वही खुद का आत्मा है और उनके पास रहा तो उसमें सबकुछ आ जाएगा। बहुत आसान बात है न! ज़रा भी मुश्किल नहीं है।

हुए वीतद्वेष, बाकी वीतराग

अत: दुनिया में जो कभी भी देखा न गया हो ऐसा प्रेम उत्पन्न हुआ है। क्योंकि जहाँ पर प्रेम उत्पन्न हो ऐसी जो जगह थी, वहाँ वे संपूर्ण वीतराग थे। अत: वहाँ पर प्रेम दिखाई नहीं देता। हम कच्चे रह गए, अत: प्रेम रहा लेकिन संपूर्ण वीतरागता नहीं आई।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा है कि 'हम प्रेमस्वरूप हो चुके हैं, लेकिन संपूर्ण वीतरागता उत्पन्न नहीं हुई', इसे ज़रा समझना था।

दादाश्री : प्रेम यानी क्या? किंचित्मात्र भी किसी के प्रति ज़रा सा भी भाव न बिगड़े, उसे प्रेम कहते हैं। अर्थात् संपूर्ण वीतरागता को ही प्रेम कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो प्रेम का स्थान कहाँ पर है? यहाँ पर कौन सी स्थिति में प्रेम कहलाएगा?

दादाश्री : प्रेम तो, जितना वीतराग होता है उतना ही प्रेम उत्पन्न होता है। संपूर्ण वीतराग को संपूर्ण प्रेम! अत: आप सभी वीतद्वेष तो हो ही चुके हो। अब जैसे-जैसे हर एक बात में वीतराग होते जाओगे, वैसे-वैसे प्रेम उत्पन्न होता जाएगा।

प्रश्नकर्ता : अब वीतद्वेष हुए लेकिन वीतराग नहीं हो पाते।

दादाश्री : वीतद्वेष हुआ लेकिन वीतराग नहीं हुआ। वीतराग अब हमारी उपस्थिति में होगा। अभी जब वीतद्वेष हुए न, उस घड़ी जो राग था न, वह हम पर आ गया और फिर हमारी वाणी पर चिपका। उसके बाद फिर पाँच आज्ञा को याद नहीं करना पड़ता, अपने आप ही याद आती हैं। अर्थात् आपका राग इस तरह से बँट गया। बाकी सभी जगह से राग उठ गया।

प्रश्नकर्ता : वह जो हमारा राग उठ गया और आप पर जो आया....

दादाश्री : वह प्रशस्त राग है। वह प्रशस्त राग, वह वीतराग होने का प्रत्यक्ष कारण है। वह किस का कारण है? कौन से कर्म का कारण है? तब कहते हैं, प्रत्यक्ष वीतराग होने का कारण है। अन्य कोई रास्ता नहीं है। प्रशस्त राग, उसमें संसारी कोई हेतु नहीं है। इसलिए प्रत्यक्ष वीतरागता करवाता है।

वीतरागता प्रकटेगी कब और कैसे?

प्रश्नकर्ता : हम महात्माओं में संपूर्ण वीतरागता कब प्रकट होगी?

दादाश्री : एक से शुरू करके सौ तक लिखना शुरू करें तो क्या एकदम से सौ आ जाते हैं?

प्रश्नकर्ता : नहीं आते।

दादाश्री : अर्थात् बीस लिखने के बाद फिर इक्कीस, बाईस, तेईस, चौबीस... हमें यह देखना है कि आगे लिखा जा रहा है या नहीं। यानी वह तो पूर्ण हो जाएगा। वही पूर्ण कर रहा है, हमें पूर्ण करने की ज़रूरत नहीं है। वह स्पीड ही इसे पूर्ण करेगी।

सब से पहले यह देखना है कि राग-द्वेष कैसे कम हों। अब पल्टी खाई है उल्टेपन से सीधेपन में, अत: अब वीतरागता कैसे बढ़े, पूर्ण हो, उस तरफ दृष्टि गई। पहले राग-द्वेष कम करने में दृष्टि थी। पूरा जगत् राग-द्वेष कम करने के लिए ही झंझट करता है न! पूरे दिन कितना दु:ख, कितनी चिंता, कितनी वरीज़, भयंकर त्रिविध ताप!

वीतरागता कैसी है आपमें? यों ही, ज़रा

सी वीतरागता, एक अंश भी वीतरागता हो तो उसे यह कहा जाएगा कि राग-द्वेष की सर्वांशता गई! एक अंश भी वीतरागता, अंदर राग-द्वेष के रस को सर्वांशरूप से खत्म कर देती है। उसमें राग-द्वेष दिखाई ज़रूर देते हैं, लेकिन अंदर रस (रुचि) नहीं रहता। उस वीतरागता को तो देखो!

प्रश्नकर्ता : आप जैसी वीतरागता महात्माओं में कब और कैसे उतरेगी?

दादाश्री : जैसे-जैसे मेरे टच में रहेंगे वैसे-वैसे, इसे रटकर नहीं सीखना है, देखकर सीखना है।

लोग आँखों के सामने देखते हैं। लोग, जीवमात्र आँखों में क्यों देखते हैं? तो कहते हैं, 'आँखों में सबकुछ पढ़ा जा सकता है, भाव! क्या भाव है, वह सारा ही पढ़ा जा सकता है'। अत: लोग समझ जाते हैं कि इस भाई को घर में घुसने नहीं देना है। इसकी आँखों में अच्छे भाव नहीं हैं', कहेंगे। इसी प्रकार ज्ञानी की आँखों में वीतरागता दिखाई देती है, किसी भी प्रकार का राग या द्वेष ऐसा कुछ भी नहीं दिखाई देता। उनकी आँखों में साँप नहीं लोटते किसी प्रकार के। लक्ष्मी की भीख नहीं होती, ऐसा कुछ भी नहीं होता, सिर्फ वीतरागता होती है। उन्हें देखते-देखते वह अपने में भी आ जाती है। और कुछ नहीं है इसमें।

यह तो मैं व्यापार की बात कर रहा हूँ कि एक बार मैंने एक व्यक्ति से कहा कि, 'इसमें करने का ऐसा है क्या? इस न के बराबर चीज़ में तूने इतना टाइम बिगाड़ दिया'। तो कहने लगा, 'लेकिन मुझे किसी ने करके नहीं बताया, वर्ना मैं जल्दी से कर लेता'। तब एक दिन मैंने करके बता दिया, तो दूसरे दिन उसने वह करके बता दिया। वर्ना दो महीनों से नहीं हो रहा था। तो उस काम की जो कला थी, वह दिखा दी। वह भी कला सीख गया और वह भी करने लगा।

अर्थात् इसमें यों थिअरेटिकल से कुछ नहीं बदलेगा, प्रैक्टिकल की ज़रूरत है। थिअरेटिकल तो सिर्फ जानने के लिए ही है। प्रैक्टिकली यानी क्या? प्रैक्टिकल में तो ज्ञानी पुरुष को देखने से, उनके टच में आने से सबकुछ प्राप्त हो जाता है, सहज ही प्राप्त हो जाता है। वह तो आपको मेरे उदय का अवसर देखने को नहीं मिला है, वर्ना मुझे कोई डाँटने वाला मिल जाए और आपको वह देखने को मिले, तब असली मज़ा आएगा!

'मैं'-'मेरा' जाने से वीतराग

आपको अभी रास्ते चलते कोई कहे कि, 'आप नालायक हो, चोर हो, बदमाश हो', इस तरह से गालियाँ दे और आपको वीतरागता रहे तो जानना कि इस बारे में उस हद तक आप भगवान हो गए। जितनी बातों में आप जीत गए, उतनी बातों में आप भगवान हो गए। और यदि आपने जगत् को जीत लिया तो फिर पूर्ण भगवान हो गए। फिर किसी से भी मतभेद नहीं होगा। बातचीत वगैरह सब होंगे लेकिन राग-द्वेष नहीं होंगे। देह को मुक्त छोड़ दो। जैसे हम लट्टू को घुमाते हैं और फिर वह अपने आप ही घूमता रहता है, खुला छोड़ दो। तब फिर राग-द्वेष नहीं होंगे न! 'मैं' और 'मेरा' चला जाएगा तो राग-द्वेष चले जाएँगे। 'मैं' और 'मेरा' के जाते ही वीतद्वेषी हो जाएगा। फिर वह जब समभाव से फाइलों का *निकाल* करेगा न, तब वह वीतराग हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : देह को मुक्त छोड़ देना यानी क्या?

दादाश्री : इस लट्टू को फेंकने के बाद वह जैसे भी घूमे वह सही है। अब फिर से उस पर डोरी लपेटने की ज़रूरत नहीं है। फिर लट्टू ऐसे घूमेगा, फिर उछलकर कूदेगा, फिर वापस एक जगह पर बैठ जाएगा। फिर ऐसे-ऐसे होगा। तब हम समझ जाएँगे कि अस्पताल की तरफ चला। अस्पताल से वापस आने पर वह सीधा हो जाता है। घात (मृत्यु का संयोग) गई, ऐसा पता चलता है न?

प्रश्नकर्ता : फिर ज़रा उल्टा भी चलता है।

दादाश्री : हाँ, उल्टा भी चलता है। उसे कुछ कह नहीं सकते, लट्टू है!

प्रश्नकर्ता : किसी भी तरह राग-द्वेष रहित होना, वही वीतराग मार्ग है।

दादाश्री : किंचित्मात्र राग नहीं और किंचित्मात्र द्वेष भी नहीं। एकदम से ऐसा नहीं हुआ जा सकता। लेकिन ज्ञान मिलने के बाद ऐसी भावना करने से, यों करते-करते धीरे-धीरे ऐसा हो सकेगा, वर्ना नहीं हो सकेगा, लाख जन्मों में भी नहीं हो सकेगा।

यह *पुद्गल* क्या कहता है कि 'तू शुद्धात्मा हो गया तो ऐसा मत मानना कि तू मुक्त हो गया। तूने मुझे बिगाड़ा था इसलिए अब तू हमें शुद्ध कर तो तू भी मुक्त और हम भी मुक्त'। तब पूछें, 'कैसे मुक्त करूँ?' तब वह कहता है, 'हम जो कुछ भी करें, उसे तू देख और कोई दखल मत करना। राग-द्वेष रहित देखता रह'।

प्रश्नकर्ता : राग-द्वेष रहित देखते रहना है?

दादाश्री : देखता रह, बस! तो हम मुक्त! राग-द्वेष से हम मैले हो चुके हैं, तेरे राग-द्वेष की वजह से, तेरी वीतरागता से हम मुक्त हो जाएँगे! परमाणु शुद्ध हो जाएँगे।

इसलिए यह 'अक्रम विज्ञान' ऐसा है कि यह बाहर किसी भी चीज़ में हाथ ही नहीं डालता। वह तो कहता है, 'तू तेरे भाव में, स्वभाव में आ जा।'

ज्ञानी के साथ बैठकर वीतराग हो सकते हैं

पूरा संसार चार प्रकार के भावों में खेलता है : 1. हिंसक भाव 2. पीड़ादायक भाव 3. तिरस्कार भाव 4. अभाव भाव। इन चारों सीढ़ियों को पार करने के बाद पाँचवीं सीढ़ी पर भगवान महावीर पहुँचे थे, वह अंतिम, 'वीतराग विज्ञान' का 'प्लेटफॉर्म' है! भगवान महावीर हिंसक, पीड़ादायक, तिरस्कार और अभाव भाव की चारों सीढ़ियों को पार करके अंतिम, 'वीतराग विज्ञान' के 'प्लेटफॉर्म' पर पहुँचे थे!

अब, द्वेष से यह सारा संसार दु:खी है। राग से दु:खी नहीं है। राग से सुख ही उत्पन्न होता है। लेकिन उसी सुख में द्वेष समाया रहता है। उसी में से द्वेष के धुएँ निकलते हैं। अत: भगवान ने फिर राग को भी छोड़ने को कहा है। पहले वीतद्वेष हो जा। भगवान पहले वीतद्वेष हुए और फिर वीतराग हुए। अत: आपको वीतद्वेष बना दिया है और मेरे साथ बैठ-बैठकर वीतराग हो जाना है। जितने समय तक बैठ पाओ, उतने समय, जिनसे जितना लाभ लिया जा सके उतना और एकावतारी है, दो अवतारी, तीन अवतारी, पाँच अवतारी, बहुत हुआ तो पंद्रह अवतार होंगे लेकिन और कोई नुकसान तो नहीं होगा न! और उसका (ज्ञान का) सुख बरतता है न आपको!

सुख बरतता है तभी तो सब यहाँ पर आते हैं न, रोज़? यहाँ मुंबई में छ:-छ:, सात-सात घंटे कौन इतना समय बिगाड़ेगा? कोई चार घंटे, कोई तीन घंटे, कोई दो घंटे, कोई-कोई सात-

आठ घंटे। छः घंटे के लिए आने वाले लोग भी हैं न यहाँ पर?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : इन वीतरागों के इस 'साइन्स' में बुद्धि का उपयोग मत करना, वर्ना मार खा जाओगे। इसे सांसारिक तराजू से नहीं तौला जा सकता। वीतरागों के मार्ग में तो 'दर्शन' का उपयोग करना होता है। उन्होंने जो देखा वही सही है, लेकिन जब तुम्हें दिखाई दे, तब सही है। यदि नहीं दिखाई दे तो बात को यों ही एक तरफ रख देना, लेकिन बुद्धि का उपयोग मत करना। अंत में, बुद्धि रहित विज्ञान हो जाएगा तब काम होगा। 'अक्रम विज्ञान' किससे देख रहा है? प्रज्ञाशक्ति से!

ज्ञान लेने के बाद, यह विज्ञान ऐसा है कि बुद्धि को कम ही करता जाता है क्योंकि सब से पहले द्वेष खत्म हो जाता है न! अर्थात् वीतद्वेष हो चुका है न! इसलिए हमेशा बुद्धि कम होती ही जाती है और फिर आगे-आगे बढ़ता जाता है।

द्वेष को विलय करने के लिए 'अक्रम विज्ञान'

आत्मा में राग या द्वेष नामक गुण नहीं हैं। ये तो सभी परमाणु, राग वाले और द्वेष वाले, पड़े हुए हैं।

जिन पर आपको बहुत द्वेष होता है उनके प्रति राग के परमाणु उत्पन्न होंगे ही और राग बहुत हुआ तो द्वेष के परमाणु उत्पन्न होंगे ही। अतः वीतराग होने को कहा है। हे प्रज्ञाधारी! यदि द्वेष उत्पन्न होने के परिणाम आएँ तो उन्हें जड़-मूल से उखाड़ देना। उस द्वेष के बीज में से ही राग उत्पन्न होगा। अतः द्वेष तो कभी भी काम का नहीं है। द्वेष को तो जड़ सहित उखाड़कर बाहर फेंक देना चाहिए, लेकिन समता से ही करना है।

आपको घर में सभी के साथ प्रेम हो लेकिन आपको द्वेष नहीं होता तो समझना कि फिर से बीज नहीं पड़ेगा। और यदि द्वेष होगा तो बार-बार उस पर प्रेम आता रहेगा। इसके बावजूद भी इस ज्ञान के बाद वैसा नया करार नहीं होगा। नए करार के बारे में आप समझ लेना। बाकी, इन सब में ज़्यादा गहराई में उतरोगे तो यह तो बहुत गहन साइन्स है। शोर्ट साइन्स है यह। सिर्फ नया करार, समझ गए सभी? नया करार, जो पिछले, पहले के पूर्व अभ्यास की वजह से, धक्का लगने पर उत्पन्न होता है। खुद के शुद्धात्मा का भान रहना चाहिए, तो बहुत हो गया।

'मैं चंदूलाल हूँ', वही आरोपित जगह पर राग है और बाकी सभी जगह पर द्वेष है। यानी कि स्वरूप के प्रति द्वेष है। एक तरफ राग हो तो उसकी दूसरी तरफ, सामने वाले कोने पर द्वेष रहता ही है। हम स्वरूप का भान करवाते हैं, शुद्धात्मा का *लक्ष* (जागृति) बैठा देते हैं इसलिए उसी क्षण वह वीतद्वेष स्थिति में आ जाता है और जैसे-जैसे आगे बढ़ता है वैसे-वैसे वीतराग होता जाता है। मैं और मेरापन निकाल दिया तो वीतरागी हो जाएगा। वीतराग अर्थात् मूल जगह का, स्वरूप का ज्ञान-दर्शन।

अपने इस 'ज्ञान' द्वारा पहले द्वेष खत्म होता है, उसके बाद राग। पहले वीतद्वेष होता है। द्वेष में से राग उत्पन्न होता है। द्वेष में से राग का बीज उत्पन्न होना बंद हो जाए तो धीरे-धीरे राग बंद हो जाता है। दुनिया में राग को विलय करने का साधन है लेकिन द्वेष को विलय करने का साधन नहीं है!

जय सच्चिदानंद

पसंद-नापसंद में से राग-द्वेष

पसंद और नापसंद, ये दो भाग हैं। पसंद यानी ठंडक और नापसंद यानी अकुलाहट? यह पसंद आने वाला यदि अधिक प्रमाण में हो जाए तो वह फिर नापसंद हो जाता है। आपको जलेबी खूब भाती हो और आपको रोज़ आठ दिन तक रात-दिन जलेबी ही खिलाते रहें तो आपको क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : तो फिर वह अच्छी नहीं लगेगी, ऊब जाएँगे उससे।

दादाश्री : पसंद-नापसंद यदि एक्सेस हो जाएँ तो वे राग-द्वेष में परिणामित होते हैं और वे यदि सहज ही रहें तो कुछ बाधक नहीं होता। क्योंकि पसंद-नापसंद, वह नोकर्म है, हल्के कर्म हैं, *गाढ़* नहीं।

उनसे किसी को नुकसान नहीं होता। ये 'ज्ञानी पुरुष' भी, यदि यहाँ पर गद्दी हो और पास में चटाई हो तो वे गद्दी पर बैठेंगे क्योंकि विवेक है और वह सभी को मान्य है। लेकिन कोई कहे कि यहाँ से उठकर वहाँ बैठिए तो हम वैसा भी करेंगे। हमें भी पसंद-नापसंद रहता है। आप हमें यहाँ से उठाकर नीचे बिठाओ तो हम वहाँ लाइक करके बैठ जाएँगे, हमें लाइक-डिस्लाइक का थोड़ा-बहुत पूर्व पर्याय है। बाकी, आत्मा को ऐसा नहीं होता। पसंद-नापसंद वह चेतनता का फल नहीं है। यह सब्ज़ी ज़रा कड़वी लगे तो तुरंत ही नापसंदगी हो जाती है, क्योंकि वह साग़-सब्ज़ी है। जिसमें पसंद-नापसंद लगे, वे सभी सब्ज़ी-भाजी हैं, वह चेतनता का फल नहीं है। 'दादा' को तो कभी भी कुछ नापसंद जैसा नहीं होता। 'दादा' तो सुबह जागते हैं तब भी ऐसे और सोते समय भी ऐसे के ऐसे ही। 'दादा' की निरंतर एक ही परिणति होती है! निरंतर आत्मरमणता में और परमानंद में ही होते हैं!

राग-द्वेष वाली वाणी कैसी होती है कि सगे भाई को मान से नहीं बुलाते और डॉक्टर को 'आओ साहब, आओ साहब' करते हैं, क्योंकि भीतर मतलब होता है कि कभी काम आएँगे। हमारी वाणी वीतराग होती है। वीतराग वाणी क्या कहती है कि, 'तू अपना काम निकाल लेना, हमें तुझसे कोई काम नहीं है।' वीतराग वाणी काम निकालकर निपटारा लाने को कहती है। 'मोक्ष हाथ में लेकर यहाँ से जा' ऐसा कहती है।

जब तक तुझे राग-द्वेष है, तब तक तू वीतराग नहीं हुआ है। यदि नीबू का त्याग किया हो और फिर किसी भोजन में भूल से नीबू डल गया हो, तो चिढ़ जाता है। इसका अर्थ यह है कि जिसका राग से त्याग किया गया हो उसे द्वेष से भुगतना पड़ता है और जो द्वेष से त्यागा हो उसे राग से भुगतना पड़ता है। किसी ने बीड़ी नहीं पीने की कसम खाई हो और उसे यदि बीड़ी पिला दे तो उसे ऐसा हो जाता है कि मेरी कसम तुड़वा दी, तब उसे भीतर क्लेश हो जाता है। राग-द्वेष से त्याग करना यानी क्या? कि एक चीज़ पसंद हो फिर भी द्वेष से त्याग कर देता है कि

मुझे यह पसंद नहीं है, इसके बावजूद जब वह चीज़ सामने आती है तब वापस टेस्ट आ जाता है। द्वेष से त्याग करने जाए तो राग से भोगता है। यह तो सभी ने राग से त्याग दिया है इसलिए द्वेष से भुगतना पड़ता है।

जब व्याख्यान दे रहे हों, तब महाराज के राग-द्वेष नहीं दिखते, वीतराग जैसे दिखते हैं। लेकिन महाराज के विरोधी पक्ष वाले आ जाएँ तो बैरभाव दिखता है। अरे! यहाँ 'ज्ञानी पुरुष' के पास भी यदि एक पक्ष के महाराज के पास दूसरे पक्ष के महाराज आकर बैठें तो भी उन्हें सहन नहीं होता। अभी तो जहाँ-जहाँ स्पर्धक, वहाँ-वहाँ द्वेष होता है। जबकि दूसरी सभी जगहों पर वीतराग रहता है, लेकिन यदि जान जाए कि मुझसे ऊँचे पद पर हैं, तो द्वेष हो जाता है। इसलिए हम कहते हैं न कि स्पर्धारहित बनना है।

दो हीरों के व्यापारी हों और स्पर्धक बनें तो द्वेष हो जाता है, फिर राग भी उसी पर होता है, तब वापस चाय भी पीते हैं साथ में बैठकर।

भगवान राग किसे कहते हैं? 'मैं चंदूलाल हूँ', 'मैंने भोजन किया' उसे राग कहते हैं और 'मैं निराहारी मात्र उसे जानता हूँ', वह राग नहीं है। 'मैं और मेरा' वही राग है।

अज्ञान के प्रति जो राग है, वही 'राग' और ज्ञान के प्रति राग हो तो वह 'वीतराग'।

इन सभी ने राग का उल्टा अर्थ लिया है। विषयों पर राग हो, उसे वे राग कहते हैं, लेकिन वह तो आकर्षण गुण है, आसक्ति है। पूरा जगत् 'राग' में फँसा है। आसक्ति मतलब आकर्षण।

अज्ञान के प्रति प्रेम, वह राग और ज्ञान के प्रति प्रेम, वह वीतराग।

(परम पूज्य दादाश्री की ज्ञानवाणी में से संकलित)

पूज्य नीरूमाँ / पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत

- '**साधना**' पर हर रोज़ सुबह 7-50 से 8-15 (हिन्दी में)
- '**दूरदर्शन उत्तरप्रदेश**' पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 और दोपहर 3 से 4 (हिन्दी में)
- '**दूरदर्शन सह्याद्रि**' पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-45 (मराठी में)
- '**दूरदर्शन सह्याद्रि**' पर हर रोज़ दोपहर 3-30 से 4 सोम से शुक्र और शनि-रवि दोपहर 11-30 से 12
- '**आस्था कन्नड़ा**' पर हर रोज़ दोपहर 12 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 5 (कन्नड़ा में)
- '**दूरदर्शन चंदना**' पर हर रोज़ शाम 6-30 से 7 (कन्नड़ा में)
- '**धर्म संदेश**' पर हर रोज़ सुबह 2-50 से 3-50, दोपहर 2-30 से 3 तथा रात 8 से 9 (गुजराती में)
- '**दूरदर्शन गिरनार**' पर रोज़ सुबह 7-30 से 8-30, रात 9-30 से 10-30 (गुजराती में)
- '**वालम**' पर हर रोज़ शाम 6 से 7 (सिर्फ गुजरात राज्य में) (गुजराती में)

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में आगामी सत्संग कार्यक्रम

अडालज

19 मार्च (बुध) - **पूज्य नीरुमाँ की 19वी पुण्यतिथि पर विशेष कार्यक्रम**

22 मार्च (शनि) शाम 5 से 7 - **सत्संग**

23 मार्च (रवि) शाम 4 से 7-30 - **ज्ञानविधि**

7 से 11 मई (बुध से रवि) **(PMHT पेरेन्ट्स महात्मा) - सत्संग शिविर**

सूचना : यह शिविर ज्ञान लिए हुए विवाहित महात्माओं के लिए ही रखी गई है। रजिस्ट्रेशन करवाना आवश्यक है। शिविर रजिस्ट्रेशन संबंधित जानकारी **Akonnect** ऐप के द्वारा दी जाएगी।

हरिद्वार में हिन्दी राष्ट्रीय शिविर - वर्ष 2025

28 मई से 1 जून - सत्संग और - ज्ञानविधि

सूचना : यह शिविर गुजराती भाषा नहीं जानने वाले मुमुक्षु-महात्माओं के लिए साल में एक बार हिन्दी में विशेष रूप से आयोजित की जाती है। शिविर रजिस्ट्रेशन संबंधित जानकारी **Akonnect** ऐप के द्वारा दी जाएगी।

Atmagnani Pujya Deepakbhai's Germany & UK Satsang Schedule - 2025

Date	Day	From	to	Event	Venue
28-Mar-25	Fri	All Days		Akram Vignan Event	Willingen - Germany
01-Apr-25	Tue				
04-Apr-25	Fri	7:30 PM	10:00 PM	Pujyashree Satasang	Shree Wanza Community Centre, Pastures Lane, **Leicester**, LE1 4EY.
05-Apr-25	Sat	10:30 AM	12:30 PM	Aptaputra Satasang	
05-Apr-25		4:30 PM	7:30 PM	**GNAN VIDHI**	
06-Apr-25	Sun	10:30 AM	12:30 PM	Aptaputra Satasang	
06-Apr-25		5:00 PM	7:30 PM	Pujyashree Satasang	
11-Apr-25	Fri	7:30 PM	10:00 PM	Pujyashree Satasang	Harrow Leisure Centre, Byron Hall, Christchurch Avenue, **Harrow**, HA3 5BD.
12-Apr-25	Sat	10:30 AM	12:30 PM	Aptaputra Satasang	
12-Apr-25		7:30 PM	10:00 PM	Pujyashree Satasang	
13-Apr-25	Sun	10:30 AM	12:30 PM	Aptaputra Satasang	
13-Apr-25		4:30 PM	7:30 PM	**GNAN VIDHI**	
14-Apr-25	Mon	7:30 AM	10:00 PM	Pujyashree Satasang	
17-Apr-25	Thu	All Days		UK Shibir	Weston-Super-Mare
21-Apr-25	Mon				

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **मुंबई :** 9323528901, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9924341188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा :** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर :** 9924343687, **भावनगर :** 9313882288, **अहमदाबाद (दादा दर्शन) :** 9574001445, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली :** 9810098564, **बैंगलूर :** 9590979099, **कोलकता :** 9830080820 **यु.एस.ए.-केनेडा:** +1 877-505-3232, **यु.के.:** +44 330-111-3232, **ऑस्ट्रेलिया:** +61 402179706

अडालज : परम पूज्य दादाश्री की 37वीं पुण्यतिथि : ता. 2 जनवरी 2025

अडालज : स्नेहमिलन : ता. 5 जनवरी 2025

राजकोट : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 10 से 12 जनवरी 2025

फरवरी 2025
वर्ष-20 अंक-4
अखंड क्रमांक - 232

दादावाणी

ज्ञान होने के बाद वीतद्वेष हो गए, इसलिए अब वीतराग होंगे

अपने यहाँ ज्ञान देते ही पहले द्वेष चला जाता है, हर किसी का। कोई गालियाँ दे तो भी उसके साथ 'समभाव से *निकाल*' करता है, लेकिन द्वेष नहीं करता। ऐसा आपको अनुभव हुआ है थोड़ा बहुत? निरंतर अनुभव होता है, गालियाँ देते हैं तब भी! वर्ना गाली का तो क्या परिणाम आता है? वह गालियाँ दे तब क्या होता है? द्वेष होता है या राग? द्वेष ही होता है। इस ज्ञान के बाद तो द्वेष करने योग्य जगह हो वहाँ पर भी अब द्वेष नहीं होता। द्वेष हो, ऐसे व्यक्ति के घर पर छोड़ दिया जाए तब भी आपको द्वेष नहीं हो, तब समझना कि यह वीतराग बनने लायक हो गया! द्वेष की जगह पर द्वेष होने लगे, वह तो मीनिंगलेस (व्यर्थ) चीज़ है।

-दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner.
Printed at Amba Multiprint, Opp. H B Kapadiya New High School, Chhatral - Pratappura Road,
At - Chhatral, Tal : Kalol, Dist. Gandhinagar – 382729.